चन्दामामा
जुलाई १९६१

जुलाई १९६१

विषय - सूची

★

एक प्रति ५० नये पैसे वार्षिक चन्दा रु. ६-००

'आप हैं एक बिगड़े हुए नवाब...'

जुलाई १९६१

हम चन्दामामा की हिन्दी प्रति हर मास पढ़ते है! इस में रसीली कहानियों के अलावा धारावाहिक उपन्यास और फोटो प्रतियोगिता में हमें पूर्ण रुचि है। जहाँ तक हम समझते हैं भारत में इस पत्रिका के मुकाबले में कोई ओर दूसरी पत्रिका नहीं मिल सकती।

महेन्द्र पाल गुप्ता, अम्बाला शहर

चन्दामामा नियमित रूप से ३-४ साल से पढ़ रहा हूँ। यह बच्चों का ही नहीं, अपर बड़े बूढ़ों सब का मनपसन्द रसाला है। मनोरंजन एवं ज्ञान से पूर्ण कहानियाँ मन को मोह लेती हैं।

कुन्दनलाल झामनाणी, किशनगढ़

मेरा मत है की "चन्दामामा" की भाषा बहुत सरल है। यह पत्रिका प्रत्येक पढ़ सकता है। मेरे पिता जी ने हिन्दी चन्दामामा के ही कारण सीखी, इसीलिए हम इस पत्रिका को छः साल से खरीद रहे है। पिताजी को हिन्दी सिखने के लिए धन्यवाद।

सुभाषचन्द्र शर्मा, लुधियाना

"चन्दामामा" की हिन्दी प्रती में हर मास पढ़ता हूं। इसमें शिक्षाप्रद कहानियों के अलावा महान पुरुषों के चरित्र भी दिये जाते हैं। इसमें दिये गये बुद्ध भगवान का चरित्र बहुत ही सुन्दर था।

नानक चन्द्र दीवान, लश्कर

"चन्दामामा" एक ऐसी पत्रिका है जिसे मैं भारत के प्रत्येक बच्चे के लिए पढ़ना आवश्यक समझता हूं।

दीपक सहल, धामपुर

मैंने आपके प्रकाशित बाल पत्रिका "चन्दामामा" प्रति मास नियमित रूप से पढ़ता हूँ। इस में प्रकाशित होनेवाली प्रत्येक रचनायें अती सुरूचीपूर्ण होती है। जो पाठकों का मन मोह लेती है।

धर्मराज कुमार, जमशेदपुर

"चन्दामामा" में बड़े ही चाव से पढ़ता हूँ यह एक सुंदर उपहार है। इस पत्रिका के आने में जब कभी देरी हो जाती है तो मैं और घर के सब पाठक उदास हो जाते हैं। बीच हमें पढ़ते हुए छोड़ता असम्भव है।

सत्यपाल गुरनवारा, जगदलपुर

मैं यह सोचता हूँ कि चन्दामामा प्रति दिन मुझे पढ़ने को मिले। इसका मूल्य यदि आप १ रु. भी रख दे तो कोई भी बात नहीं, मैं तो यही कहूँगा कि आप इसके पृष्ठ बढ़ा दे साथ मूल्य भी।

जवाहर, कानपुर

मैं तथा मेरे परिवारवाले (बड़े से छोटे तक) चन्दामामा बेहद पसंद करते है। जब कभी भी चन्दामामा हाथ में आती है तो सब काम छोड़कर इसे पढ़ने बैठ जाते है। इसकी सरल भाषा, मधुर कहानियाँ और जी को लुभा लेनेवाले रंगीन मोहक चित्र मन को मोह लेते है। इसलिए हमारे मित्र भी बहुत पसंद करते हैं।

छगनलाल बैद, रायपुर

प्रकाशित कहानियाँ और धारावाहिक कथायें और बेताल कहानियाँ बहुत ही सुन्दर लगती हैं! चित्र भी पढ़ते वक्त सजीव से प्रतीत होते हैं। "चन्दामामा" बच्चों का ही नहीं वरन् वयस्कों का भी मन मोह लेता है! "चन्दामामा" (मासिक) की जितनी भी प्रशंसा की जाये थोड़ी ही है!

मथुरालाल सोलंकी, बड़गाँव

CIBA

तन्दुरुस्त मुस्कुराहटों के लिये

ताज़ा फलों की सुगंध वाला

बिनाका टूथपेस्ट

"बिनाका रोज़" (गुलाबी) बच्चों के कोमल मसूढ़ों के लिये आदर्श टूथपेस्ट है। दाँतों पर जम जाने वाली पीली परत और सड़न दूर करने के लिये गुणकारी है।

"बिनाका ग्रीन" (हरा) टूथपेस्ट — जिसमें 'क्लोरोफ़िल' भी है — मसूढ़ों की तकलीफ़ें, दाँतों की पीली परत, बदबू और सड़न दूर करने के लिये लाजवाब है।

जब अतिश्रम से पीड़ा होती हो तब लगाइये

स्लोन्स लिनिमेन्ट

जब स्लोन क्रियाशील होता है तो पीठ के दर्द और मांस पेशियों की पीड़ा को आराम मिलता है।

हमें कभी न कभी "कसरती" होना पड़ जाता है।—हम में से बहुत से आकस्मिक श्रम व कार्य के लिए उद्यत भी नहीं रहते। मांस पेशियों से इस कारण पीड़ा पैदा हो जाती है। जोड़ों में जकड़न-सी हो जाती है। ज्योंही दर्द मालूम हो त्योंही स्लोन लिनिमेन्ट लगाइये। स्लोन तुरंत गरम और आराम देह खून दर्द वाले स्थान पर पहुँचाता है। जैसे जैसे दर्द जाता रहता है, वैसे वैसे जल्दी जल्दी आराम भी मिलता जाता है। घर में स्लोन्स को रखिये। जब कभी दर्द कहीं हो, इसका उपयोग कीजिये।

स्लोन बाम भी उपलब्ध है। इसका त्रिगुणात्मक प्रभाव मांस पेशियों को पीड़ा से मुक्त करता है।

स्लोन्स लिनिमेन्ट

"बोतल में डाक्टर"

वार्नर-लेम्बर्ट फार्मस्यूटिकल कम्पनी (सीमित दायित्व के साथ U.S.A. में स्थापित)
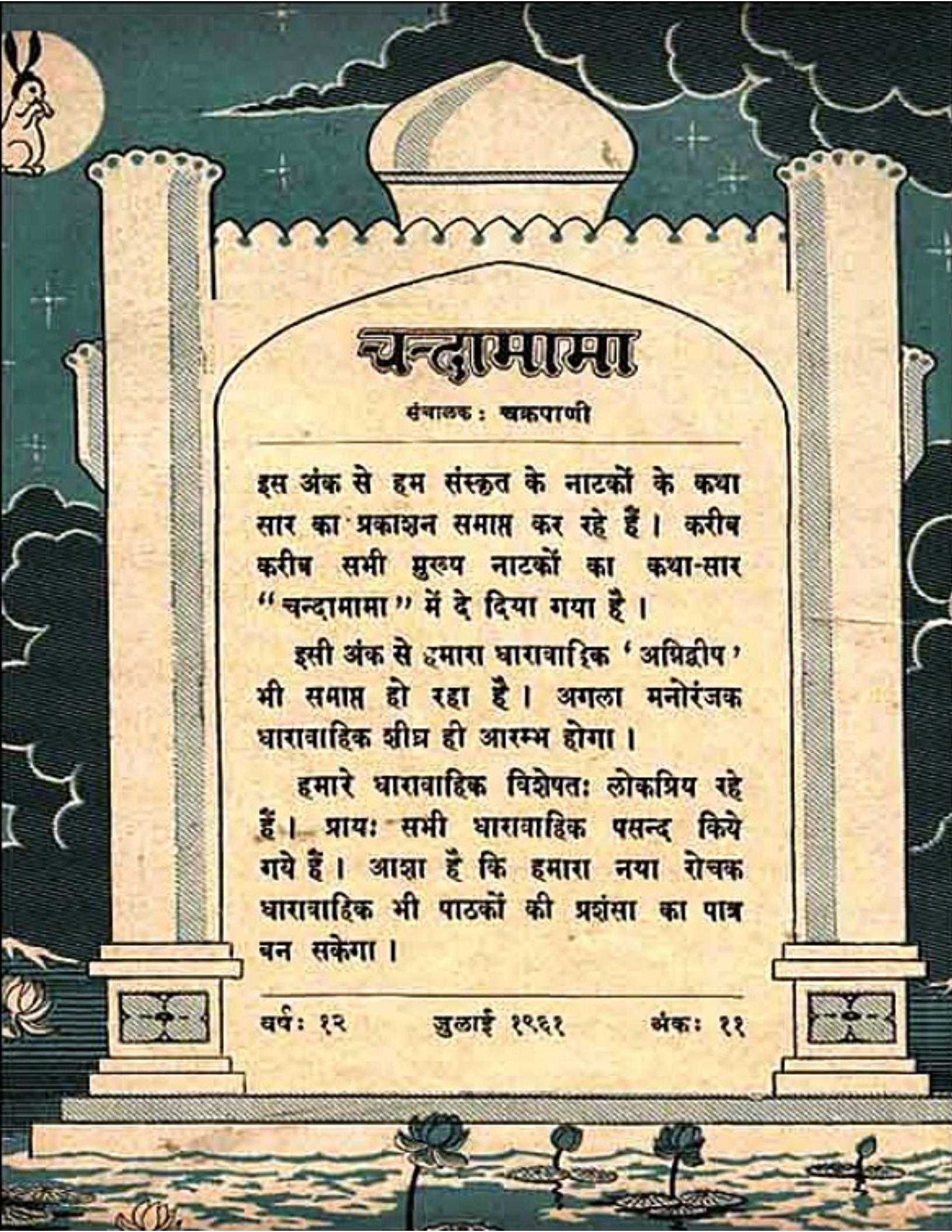
चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

इस अंक से हम संस्कृत के नाटकों के कथा सार का प्रकाशन समाप्त कर रहे हैं। करीब करीब सभी मुख्य नाटकों का कथा-सार "चन्दामामा" में दे दिया गया है।

इसी अंक से हमारा धारावाहिक 'अग्निद्वीप' भी समाप्त हो रहा है। अगला मनोरंजक धारावाहिक शीघ्र ही आरम्भ होगा।

हमारे धारावाहिक विशेषतः लोकप्रिय रहे हैं। प्रायः सभी धारावाहिक पसन्द किये गये हैं। आशा है कि हमारा नया रोचक धारावाहिक भी पाठकों की प्रशंसा का पात्र बन सकेगा।

वर्षः १२ जुलाई १९६१ अंकः ११

महिमावाली बेहंगी

हिमालय पर्वत में मानसरोवर के पास के चरागाह में गाँववाले अपनी गौवें चराया करते। चरवाहे जब सवेरे शाम गौवों की गिनती करते, तो गौवों की संख्या ठीक रहती। यदि कोई दुपहर को गिनता, तो ऐसा लगता, जैसे एक गौ अधिक हो।

इसका एक कारण था। प्रति दिन कामधेनु भी उसी चरागाह में आकर बाकी और गौवों के साथ चरा करती। उनके साथ रहा करती।

पर किसी ने कामधेनु का आना जाना नहीं देखा था।

गौवें जब चरागाह में चर रही होतीं, तब जो अधिक गौ दिखाई देती थी, वह कामधेनु ही थी, यह किसी को न मालूम था।

वहाँ पास के, एक गाँव में एक बूढ़ा रहा करता था। वह रोज कन्धे पर बेहंगी रखकर, जंगल में जाया करता। वह वहाँ सूखी लकड़ियों को चुनकर इकट्ठा कर लेता और गट्ठर बाँधकर बेहंगी के दोनों तरफ़ रखता, गाँव ले जाकर, उन्हें बेच देता। कुछ पैसे कमाता। इस तरह गुज़ारा करने की कोशिश करता, पर वह पैसा उस बिचारे के गुज़ारे के लिए काफ़ी न था।

एक बार वह जंगल की ओर जा रहा था, तो उसको रास्ते में कुछ गौवें चरती दिखाई दीं।

वह बेहंगी से उनको हाँकता, रास्ता बनाता चला गया। इस प्रकार उसके जाने से कामधेनु के कुछ बाल उसकी पुरानी टूटी फूटी बेहंगी में अटक गये। किन्तु उसे कुछ न मालूम हुआ।

पर वह बूढ़ा न जानता था कि उसने कामधेनु को हाँका था, या उसके बाल उसकी बेहंगी में फंस गये थे।

परन्तु जब उसने रोज की तरह लकड़ियाँ चुनकर, गट्ठर बाँधकर बेहंगी उठाई, तो उस में कौवे के पंख जितना भी भार न था।

बूढ़े को आश्चर्य हुआ, उसने कुछ और लकड़ियाँ काटकर, बेहंगी के दोनों ओर रख लीं। बेहंगी उठा कर देखी। तब भी भार पंखें जितना ही था।

बूढ़े को आश्चर्य तो था ही, अब उसे आनन्द भी हुआ। उसने अपने कन्धे जितने ऊँचे बड़े-बड़े लकड़ियों के गट्ठर बनाये। उनके आगे पीछे बेहंगी लगाकर, वह उनको ढोकर गाँव ले गया।

लकड़ियाँ जब बेचीं, तो बूढ़े को रोज़ की अपेक्षा चार गुनी आय हुई। उसके घर का खर्च तो पूरा हुआ ही उसके पास कुछ पैसे भी बच गये।

उसके बाद वह बूढ़ा उस बेहंगी की दया के कारण ढेर-सी लकड़ियाँ लाता और उन्हें लाकर बेचता। वह सुख से रहने लगा।

एक दिन बूढ़ा जब बेहंगी लेकर आ रहा था, तो एक धनी सामने से आया।

दूर से उसे आते देख उसने सोचा "जो इतना भार ढो रहा है, वह कितना बलवान होगा।" जब उसने उसको पास आकर देखा, तो बेहंगी ढोनेवाला बूढ़ा निकला। उसका आश्चर्य और बढ़ा।

"अरे बूढ़े! इस उम्र में भी इतना भार ढो रहे हो!" धनी ने पूछा।

"इसमें मेरी खूबी क्या है, क्या इसका चौथाई हिस्सा भी मैं ढो पाऊँगा! यह सब तो इस बेहंगी की दया है महाराज।" बूढ़े ने विनयपूर्वक कहा।

धनी को विश्वास नहीं हुआ। उसने स्वयं बेहंगी उठाकर देखी। एक अंगुली से भी जब वह उठाता, तो बेहंगी आसानी से ऊपर उठती।

"बूढ़े, जो कहार हमारे लिए पानी लाता है, वह ढोते-ढोते मर रहा है। क्या यह बेहंगी देगो, मैं तुम्हें तीन सौ मुहरें दूँगा!" धनी ने कहा।

पहिले तो बूढ़ा देने के लिए नहीं माना। फिर वह मान गया। तीन सौ मुहरों से वह जिन्दगी-भर आराम से रह सकता था। उसने गाँव में लकड़ियाँ बेच दीं और बेहंगी धनी को बेचकर, उससे तुरत मुहरें वसूल कर लीं।

धनी जब बेहंगी घर ले जा रहा था, तो उसे वह बहुत पुरानी दिखाई दी। कहीं कहीं तो वह छिलका छिलका हो रही थी। इसलिए रास्ते में उसने बढ़ई से उस पर रेती करवाई। उसे साफ़ सुथरा बनाकर घर ले गया।

परन्तु बढ़ई की रेती लगते ही कामधेनु का बाल उसमें से निकल गया और वह मामूली बेहंगी बन गई।

स्यमंतक मणि

छठा अध्याय

देख भागते शतधन्वा को
दौड़े कृष्ण और बलराम,
पीछा करने लगे तुरत ही
किये बिना क्षण-भर विश्राम।

शतधन्वा तो रहा भगाता
आगे आगे अपना घोड़ा,
मुड़-मुड़ पीछे कभी देखता
कभी जमाता कसकर कोड़ा।

इसी तरह वह निकल गया जब
मथुरा नगरी से अति दूर,
घोड़ा उसका लगा हाँफने
हुआ बहुत ही थककर चूर।

बेदम होकर आखिर में वह
गिर पड़ा जमीं पर सहसा,
उठा नहीं फिर लाख उठाये
तोड़ दिया दम उसने सहसा।

घोड़ा खोकर शतधन्वा तब
भागा पैदल ही ले जान,
आ धमके तब वहाँ कृष्ण भी
मानों उसके काल समान।

शतधन्वा ने उन्हें देखकर
फेंके अनगिनत पत्थर उनपर,
चला दिया तब मनमोहन ने
अपना चक्र सुदर्शन उसपर।

गिरा तुरत ही शतधन्वा का
मस्तक पूरा धड़ से कटकर,
पड़े कृष्ण ही जब थे पीछे
जाता भला कहाँ वह बचकर।

शतधन्वा का वध कर मोहन
लगे खोजने मणि वह झुककर,
उलट-पुलटकर देखा शव को
मिली न लेकिन मणि वह सुन्दर।

"यात्रिक"

हुए कृष्ण तब अति चिंतातुर—
गयी सभी कोशिश बेकार,
मणि ही नहीं मिली यह मुझको
गया जीतकर भी मैं हार।

तब तक आ पहुँचे हलधर भी
कहा कृष्ण ने सारा हाल,
लेकिन हलधर ने यह समझा
चली कृष्ण ने ही है चाल।

बोले वे गंभीर भाव से—
"लोभ पतन का कारण मूल,
लेकिन लगता तुम भी इसको
गये आज सचमुच ही भूल।

मणि तो हथियायी है तुमने
यही मुझे अब लगता है,
मणि थी इसके पास भला फिर
कहाँ अचानक जा सकती है।

धूर्त एक नंबर के तुम तो
बचपन से ही सदा रहे हो।
धूल झोंककर यों आँखों में
तुम अब बहका मुझे रहे हो।

खैर, मुझे क्या लेना देना
मणि का मुझको लोभ नहीं है,
जाता हूँ मैं जनकपुरी अब
मुझको कुछ भी क्षोभ नहीं है।"

यों करके आरोप कृष्ण पर
गये जनकपुर को बलराम,
इधर कृष्ण भी चिंतातुर हो
लौट गये अपने ही धाम।

अक्रूर तो था द्वारका में
मन ही मन अति ही भयभीत,
कृतवर्मा था बढ़कर उससे
चिंता से पागल भयभीत।

नहीं रहेगी छिपी बात कुछ
कृष्ण बड़ा चालाक है,
और कृष्ण से बचकर रहना
नहीं यहाँ आसान है।

यही सोचकर कृतवर्मा तो
भाग गया झट हस्तिनापुरी,
और उसी की तरह अक्रूर
भी चला गया काशिकापुरी।

द्वारका में उन्हीं दिनों तब
पड़ा बहुत ही बड़ा अकाल,
भूख महामारी के चलते
लगे लोग मरने अकाल।

देख दशा यह दीन प्रजा की
कृष्ण हुए चिंता में लीन,
किन पापों का यह सब है फल
भी चैन किसीने मन की छीन।

आखिर बूढ़ा एक वहाँ पर
बोला आकर के तब उनसे—
"अक्रूर नहीं है यहाँ इसीसे
वृष्टि न जल की होती घन से।

आये फिर अक्रूर अगर तो
होगा ही दुर्दिन सब दूर,
हरियाली फिर से छायेगी
बरसेगा पानी भरपूर।"

यह सुनते ही उसी समय झट
दूत कृष्ण ने एक पठाया,
जो द्वारका में अक्रूर को
बुला शीघ्र सादर ले आया।

आया जब अक्रूर वहाँ तो
घिर आये बादल घनघोर,
बारिश खूब हुई धरती पर
खुशियाली छायी चहुँ ओर।

जनकपुरी में बिना समय कुछ
आये वापस हलधर वीर,
कभी कृष्ण पर व्यंग वचन के
छोड़ दिया करते वे तीर।

छिद्ता रहता मर्म कृष्ण का
हो उठते वे बहुत अधीर—
आह, लगा कैसा यह लांछन
सही न जाती उर की पीर!

अक्रूर को बुलवा आखिर में
बोले सबके सामने—
"मणि है कहाँ? बतायें मुझको
रखा उसे है आपने।

शतधन्वा ने मरते मरते
कही मुझे है असली बात,
कह दें आप खुलासा सब कुछ
नहीं छिपायें कोई बात।"

अक्रूर ने यह सुन तुरत ही
मणि निकालकर रक्खा आगे,
कहा—"प्रभो, यह अभी लीजिए
अब न करूँगा गलती आगे।

मणि तो यह शतधन्वा ही
गया मुझे था सचमुच सौंप,
समय देखकर जिसे आज मैं
रहा आपको हूँ अब सौंप।"

दंग रह गये लोग देख यह
सबको सब कुछ ज्ञात हुआ,
बोले यह बलराम—"कृष्ण, अब
दूर सभी अपवाद हुआ।"

कथा शमंतक मणि की है यह
रखें सदा इसको हम याद,
होते दूर इसे पढ़ने से
मिथ्या लांछन औ अपवाद!

★ (समाप्त) ★

[१८]

[अग्निद्वीप से उग्रदत्त ने अपने पोषक पिता उग्राक्ष के पास मदद के लिए खबर भेजी। तुरत उग्राक्ष अपने राक्षसों को लेकर, नौकाओं में अग्निद्वीप के लिए निकल पड़ा। जब समुद्र में उन्होंने एक दिन और एक रात बिता दी, तो भयंकर पक्षी उन पर हमला करने आया। इसके बाद—]

भयंकर पक्षी को देखते ही राक्षस डर गये। उग्राक्ष ज़ोर से गरजा, "मशालों को तेल में भिगोकर जलाओ।" तुरत राक्षसों ने मशालें जला लीं। भयंकर पक्षियों के सवार आकाश में झट ऊपर उठे और नावों में सवार राक्षसों पर भाले फेंकने लगे।

इस तरह कोई पन्द्रह मिनट तक युद्ध होता रहा। भयंकर पक्षियों पर सवार शेर का चमड़ा पहिननेवाले इस तरह नीचे की ओर आये, जैसे नावों में उतर रहे हों। मगर इतने में ही अट्टहास करके वे ऊपर उड़ गये और आखिर अग्निद्वीप की ओर चल दिये।

न मालूम क्या कारण था कि न उस दिन, न उस रात को ही शेर का चमड़ा पहिननेवालों ने राक्षसों पर हमला किया। तीसरे दिन सूर्योदय के समय नौकायें अग्निद्वीप के पास पहुँचीं।

“नौकाओं को कुछ और दूर पश्चिम दिशा की ओर जाने दो। वहाँ दो चमकते ज्वालामुखियों के बीच में एक घाटी है। यदि हम वहाँ पहुँच गये, तो उस घाटी से हम द्वीप के बीच में पहुँच सकेंगे।” भालू का चमड़ा पहिननेवाले ने कहा।

भालू का चमड़ा पहिननेवाले के कहे अनुसार वे जब नौका को तट से लगे लगे कुछ और दूर ले गये तो ज्वालामुखियों के बीच में एक घाटी दिखाई दी। परन्तु जैसा कि उग्राक्ष और भालू का चमड़ा पहिननेवाले ने सोचा था, घाटी निर्जन न थी। घाटी के द्वार पर भालू का चमड़ा पहिननेवाले, शेर का चमड़ा पहिननेवालों से भयंकर युद्ध कर रहे थे। कुछ भयंकर पक्षी घाटी के अन्त में भालू का चमड़ा पहिननेवालों पर हमला कर रहे थे।

ज्योंही राक्षस नौकाओं से उतरे, त्योंही शेर का चमड़ा पहिननेवाले, भालू का चमड़ा पहिननेवालों के बीच में से रास्ता निकालकर द्वीप के अन्दर भागने लगे। भालू का चमड़ा पहिननेवाले उनमें से जो मिला उसको मारते जाते थे और राक्षसों के पास चलते जाते थे। सब से आगे खड़े भालू का चमड़ा पहिने एक व्यक्ति को देखकर उग्राक्ष चकित-सा रह गया। वह चिल्लाया—“उग्रदत्त यह क्या वेश बना रखा है!” उसके हाथ पकड़कर उसने उसको कन्धों पर बिठा लिया।

अपने परम शत्रु एकपाद से लड़ने के लिए आये हुए राक्षसों की सहायता पाकर भालू का चमड़ा पहिननेवालों को और जोश आ गया। उग्रदत्त ने दो चार शब्दों में शत्रु पक्ष की शक्ति के बारे में अपने पोषक पिता को बताया। फिर उसने भालू का चमड़ा पहिननेवालों के सरदार

कन्थ से उसका परिचय कराया। "यह ही इनका सरदार है। इन्होंने ही शेर का चमड़ा पहिननेवालों से मेरी रक्षा की है।"

कन्थ ने उग्राक्ष को नमस्कार करके कहा—"उग्राक्ष! तुमने आकर हमें पहाड़ी गुफ़ाओं के अन्धेरे में जिन्दगी बसर करने से बचा दिया। एकपाद-सा क्रूर न कभी हुआ, न होगा। यदि हम उस और उसके मित्र करवीर और नागवर्मा को मार सके तो तुम्हारे देश और इस द्वीप का भी कल्याण होगा।"

"फिर देरी किस बात की है! उसके किले को आओ घेर लें।" उग्राक्ष ने अपने पोषित लड़के को कन्धे पर से उतारते हुए कहा।

"यह काम इतनी जल्दी होनेवाला नहीं है। कुछ सोचना होगा। अभी उसके हाथ में चन्द्रसेना नाम की राजकुमारी है। हमें यह देखना है कि उसको किसी प्रकार की हानि न हो। यही नहीं, उनके साथ तुम्हारा एक आदमी है, जिसका नाम आरुद्र है। वह हमेशा उसके पास ही रहता है और तुम्हारे भेद बताता रहता है। यह हमें वहाँ से भागकर आये हुए तुम्हारे देशवासियों ने ही बताया है।" कन्थ ने कहा। यह मालूम होते ही कि आरुद्र शत्रुओं में जा मिला था, उग्राक्ष ने आँखें लाल कीं। "तो रुद्र कहाँ है?" वह चिल्लाया। रुद्र घबराता उसके सामने आया।

"अरे, कैसे यह आरुद्र शत्रुओं से जा मिला! तुम दोनों तो बड़े दोस्त थे न!" उग्राक्ष ने पूछा।

"उसका मैं ही अकेला थोड़े दोस्त हूँ। उग्रदत्त भी तो है। शायद चन्द्रसेना से विवाह करने के लिए वह हमें यों धोखा दे रहा है।" रुद्र ने कहा।

"चन्द्रसेना की शादी मेरे लड़के से होकर रहेगी। इसे कोई नहीं रोक सकता। उस भारुद्र के टुकड़े टुकड़े कर दूँगा।" उमाक्ष चिल्लाने लगा।

"ज़रा सम्भलो तो उमाक्ष, अभी तक मैंने एक रहस्य तुम्हें नहीं बताया है। एकपाद को मारना आसान नहीं है। उसके पास एक शक्ति है। यदि किसी ने उसका खून देखा या उसने किसी का खून देखा, तो वह ज़रूर मर जायेगा।" कन्व ने कहा।

कन्व की बात सुनकर उमाक्ष द्विविधा में पड़ गया। तुरत उसकी बात न समझ सका। पर जब उसे बात पूरी तरह समझ में आई तो वह हैरान रह गया। "कन्व, मैंने यह बात कहीं नहीं सुनी है। बड़ा आश्चर्य हो रहा है। फिर एकपाद को मारा कैसे जाय!"

"हम में से कई को मरने के लिए तैयार होना पड़ेगा। पहाड़ की चोटी पर के किले में घुस जाना कोई बड़ी बात नहीं है। क्योंकि हमारे पास कुछ भयंकर पक्षी हैं, इसलिए वे उनको लेकर हमें नहीं रोक सकते। तुम्हारे आदमियों में से एक एक, सौ सौ शेर का चमड़ा पहिननेवालों को पकड़कर दूर फेंक सकते हैं। परन्तु किले को घेरकर एकपाद को पकड़ने के प्रयत्नों में ही खतरा है। यदि वह अपने शरीर पर कुछ घाव करके हमारे सामने आया तो हम जीवित वापिस न आ सकेंगे।" कन्व ने कहा।

"क्या वह बहुत बल्वान है!" उमाक्ष ने पूछा।

"बल्वान! वह तो बूढ़ा है, फिर लंगड़ा है। यदि हाथ में आ जाये तो दस बरस का लड़का उसे किले की दीवारों पर से नीचे लुढ़का सकता है।" कन्व ने कहा।

"हाँ तो हमारे लोगों में से कुछ मरने के लिए तैयार हैं। हम जब उसके किले में घुस जायेंगे, तो वह कहाँ है, यह जानने के लिए एक आगे आगे चले। हम सब बिना सिर उठाये फर्श देखते देखते उसके पीछे चलेंगे। आगेवाला जब उसको देखेगा, तो बतायेगा कि वह कहाँ है। यदि वह तब मर भी गया तो कोई बात नहीं है। हम आँखें मूँदकर उसे घेर लेंगे और उसको आँखें मूँदे मूँदे ही मार देंगे।" उग्राक्ष ने कहा।

"फिर जब हम आँखें खोलेंगे, तो खून दिखाई देगा न!" कन्ध ने सिर घुमाते हुए पूछा।

वह बड़ी समस्या है। यहाँ खड़े खड़े उस बारे में नहीं सोचा जा सकता। उसको मारने के बाद वह सब देख लेंगे। उसके किले का रास्ता बताओ।" कहता उग्राक्ष आगे आगे चला।

भालू का चमड़ा पहिननेवाले ने रास्ता दिखाया। सब घाटी में थोड़ी दूर चले। वहाँ बायीं ओर की पहाड़ी पर, ऊँचे नीचे पत्थरों पर चढ़कर चोटी के किले की ओर जाने लगे। आकाश में कहीं भयंकर पक्षी न थे। न कहीं शेर का चमड़ा पहिननेवाले ही दिखाई दिये। सर्वत्र निश्शब्दता थी।

"एकपाद ने कोई चाल चली है। सारे शरीर पर खून पोतकर वह किले की दीवारों पर यकायक हमें दिखाई देगा और हमें यों मार देगा। यह सम्भव है।" कन्ध ने कहा।

"जो आगे चल रहा हो, उसके सिवाय कोई भी किले की दीवारों की ओर न देखें।" उग्रदत्त चिल्लाया।

जब वे किले की दीवारों के पास पहुँचे, तो उनको कुछ आहट सुनाई दी। पर

थैले में रखकर मैंने थैले का मुँह बांध दिया है। कोई डर नहीं है। पर लगता है नागवर्मा और करवीर यहीं कहीं शायद छुपे हुए हैं।" फिर ऐसी ध्वनि हुई जैसे दो तलवारें टकरा रही हों। चन्द्रसेना एक हाथ में तलवार लेकर चिल्लाई—"आरुद्र करवीर से लड़ रहा है।" फिर वह किले के आँगन में कूद पड़ी।

उग्रदत्त और उग्राक्ष अपने साथियों को साथ लेकर चन्द्रसेना की डाली हुई रस्सियों के सहारे जल्दी जल्दी किले की दीवारों पर चढ़ने लगे। वे जब किले में उतरे तो करवीर से आरुद्र और नागवर्मा से चन्द्रसेना तलवार लेकर लड़ रहे थे। उग्राक्ष यह दृश्य देखते ही फूला न समाया। "ठहरो, चन्द्रसेना सचमुच तुम क्षत्रिय कन्या हो। तुम्हारी होनेवाली सास इसी तरह तलवार लेकर पालकी में से कूदी थी। उसको शेर का चमड़ा पहिननेवालों से युद्ध करते मैंने स्वयं देखा है।" कहते उसने नागवर्मा की ओर अपनी पत्थर की गदा उठायी थी कि इतने में नागवर्मा चन्द्रसेना की तलवार की चोट खाकर—"बाप रे बाप" चिल्लाता पीछे गिर गया। राक्षसों

किसी ने सिर न उठाया। थोड़ी देर बाद किले की दीवार पर एकपाद की आवाज़ घंटे की तरह गूँजी—"यह लो, सब देखो, सुदर्शन की लड़की को इतनी ऊँचाई से नीचे फेंक रहा हूँ।"

एकपाद की धमकी सुनकर सब घबरा गये। उग्राक्ष भी। पर किसी ने सिर न उठाया। इतने में किले की दीवारों से आवाज़ आई। "धोखा, धोखा।" फिर तुरत आरुद्र चिल्लाया—"उग्रदत्त, चन्द्रसेना कुछ रस्सियाँ छोड़ रही है, उसके सहारे ऊपर चले आओ। एकपाद को चमड़े के
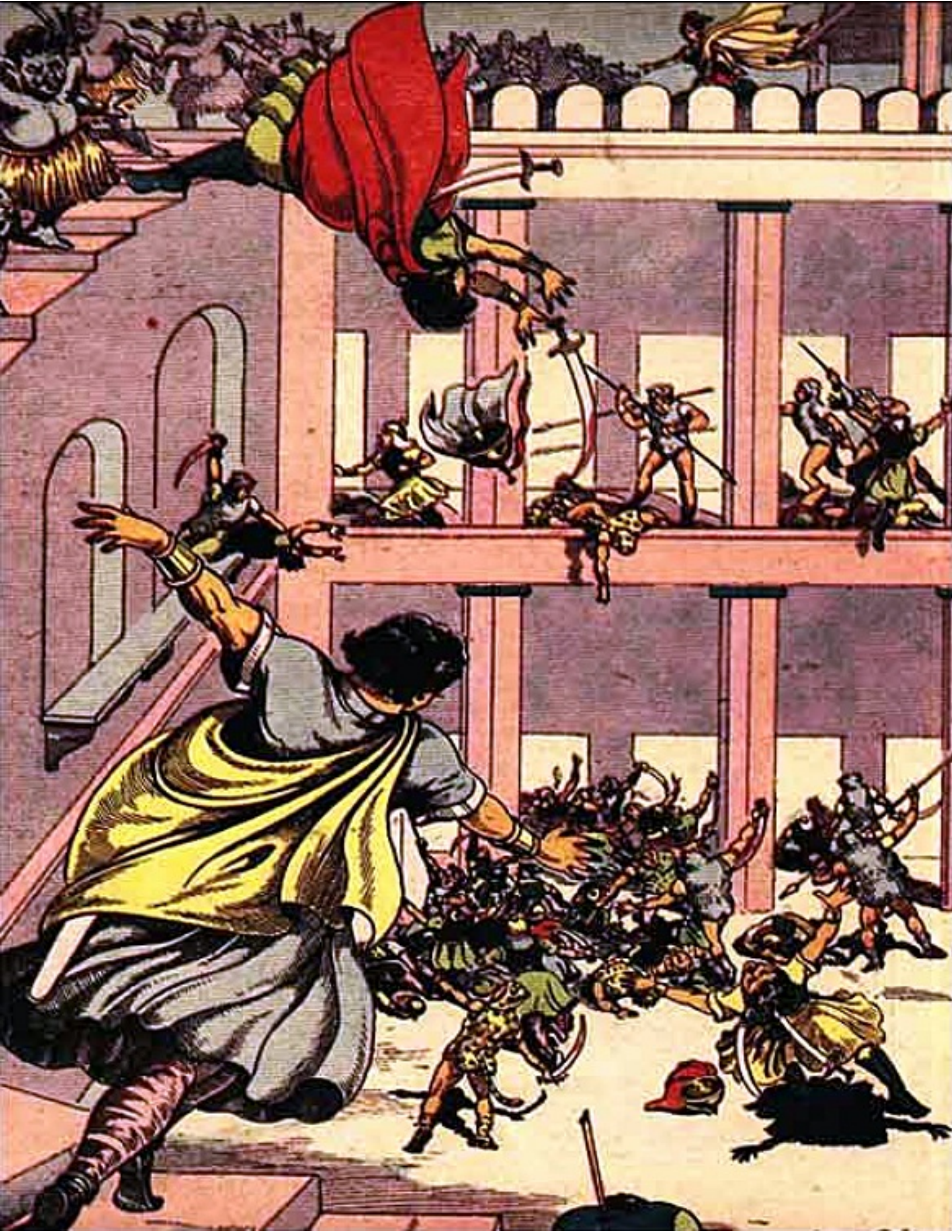
को देखकर करवीर भागने ही लगा था कि आरुद्र की तल्वार उसकी रीढ़ में जा घुसी। वह भी—"अम्मा" चिल्लाता आगे गिर गया।

कन्थ बड़े जोश में उस थैले को जिस में एकपाद था, उठाते हुए चिल्लाया—"एकपाद! क्या अन्दर गरमी है? ठहरो, अभी मैं तुम्हें उस ज्वालामुखी में छोड़े देता हूँ। तुम्हारा और इस संसार का भी इसी तरह भला होगा।" कहता वह पासवाले ज्वालामुखी की ओर मुड़ा।

"क्योंकि मैने तुम्हारे द्रोही की तरह व्यवहार किया था, इसलिए एकपाद ने मेरा विश्वास किया। चन्द्रसेना को मार दूँगा—यह चिल्लाकर वह तुम्हारा ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना चाहता था, ताकि उसके घाव देखते ही तुम सब मर जाओ। मैं तो ऐसे मौके की ही ताक में था। मैं पीछे से उस पर कूदा और उसे चमड़े के थैले में बन्द कर दिया। वह थैले में चाहे अपने पर कितने ही घाव लगाये, हमें क्या!" आरुद्र ने कहा। सबने उसकी अक्लमन्दी की प्रशंसा की।

उग्राक्ष, उग्रदत्त और चन्द्रसेना अपने साथियों के साथ जब अपने देश वापिस पहुँचे तो चित्रसेन और सामन्त सुदर्शन के आनन्द की सीमा न थी। इस शुभ मुहूर्त में ही उग्रदत्त और चन्द्रसेना का विवाह भी सम्पन्न हुआ।

उस विवाह के अवसर पर, कन्थ बहुमूल्य उपहार लेकर अपने लोगों के साथ कपिलपुर आया।

उग्रदत्त और अपने सामन्त ससुर के राज्य और उग्राक्ष के जंगली राज्य का शान्तिपूर्वक बहुत समय तक परिपालन करता रहा। (समाप्त)

गर्वभंग

किसी ज़माने में हिमाचल प्रान्त में एक शक्तिशाली राजा हुआ करता था। वहाँ लोग बड़े गरीब थे। उसी प्रान्त में एक जादूगर रहा करता था, वह अपने जादू से साथवालों का मनोरंजन करता, आनन्द देता। जादू के भ्रम में गरीब भी ऐसा अनुभव करते जैसे वे राजाओं के योग्य बढ़िया भोजन कर रहे हों, ऐसा मालूम होता जैसे नन्दनवन में सैर कर रहे हों, या अप्सराओं के संग हों। मगर ये सब आनन्द तात्कालिक ही थे। वे भी, जो शादी नहीं कर पाते थे, न गृहस्थी ही चला पाते थे, जादू के कारण कुछ समय तक यह सोचते जैसे उनका विवाह हो गया हो, और वे गृहस्थी चला रहे हों। वे आनन्दित होते।

जादूगर की शोहरत राजा तक भी पहुँची। उसने उसको एक दिन बुलाकर कहा—"सुनता हूँ कि तुम बहुत-से जादू जानते हो। कुछ जादू मुझे भी दिखाओ।"

"महाप्रभु, मेरे जादू तो छोटे मोटे लोगों के लिए हैं, आप जैसे बड़े लोगों के लिए नहीं।" जादूगर ने कहा।

"जरा मुझे भी उन्हें देखने दो। जब मैं ही कह रहा हूँ, तब तुम्हें किस बात का संकोच है।" राजा ने कहा।

"यदि आप मुझे लिखकर अभयदान दें तो मैं अपना हुनर आपको दिखाऊँगा।" जादूगर ने कहा।

राजा, उसके कहे अनुसार अभयदान का पत्र लिख ही रहा था, कि राजमहल के बाहर लोगों का कोलाहल, घोड़ों का हिनहिनाना सुनाई दिया। जब राजा ने खिड़की में से देखा, तो महल के पास की झाड़ियों में कुछ लोग घास काट रहे थे।

उदयकुमार

"ये लोग बिना इजाज़त के घास काट रहे हैं, उनको और उनके घोड़ों को पकड़कर यहाँ जल्दी लाओ।" उसने सिपाहियों को हुक्म दिया।

जब सिपाही बाहर गये, तो बाहर मैदान में, हज़ारों लोग तरह तरह के कामों में लगे हुए थे। सब जगह डेरे लगे हुए थे। ऐसा लगता था, जैसे वहाँ कोई छावनी आ गई हो। एक बड़े डेरे के सामने एक सोने का सिंहासन और दूसरा चान्दी का सिंहासन रखे हुए थे। यह देख, सैनिकों को कंपकंपी हुई। उन्होंने, अपनी ओर आते पानी ढोनेवाले कहार से बड़े विनयपूर्वक पूछा—"आप सब लोग कौन हैं! आप किस काम पर यहाँ तशरीफ़ लाये हैं।"

"हम सब पाताल से चले आ रहे हैं। हम नाग राजा के लोग हैं और ये जो सिंहासन दिखाई दे रहे हैं उनमें एक राजा का है और दूसरा राजकुमार का" कहार ने कहा।

सिपाहियों ने जाकर यह बात राजा से कही। राजा ने चकित होकर सोचा—"नाग राजा आये हैं तो जाकर उनके दर्शन करेंगे। मेरी प्रजा उनकी पूजा करती है। बच्चों के नाम उन पर रखे जाते हैं।" वह बड़े बड़े उपहार लेकर अपने नौकर चाकरों के साथ बड़े डेरे के पास गया।

डेरे के सामने सिंहासनों पर पाताल देश का राजा और उसके लड़के बैठे हुए थे।

राजा ने नाग के सामने साष्टांग करके कहा—"ओ पाताल महेश्वर आपने किस काम पर हमारे प्रान्त को पवित्र किया है!"

"इसपर नाग राजा ने यह कहा—"मैंने अपने बाग में एक वृक्ष लगाया। उसे बड़ी मेहनत से बड़ा किया। वह बढ़ता गया,

इतना बड़ा कि उसकी टहनियाँ स्वर्ग में पहुँचीं। अब उस पर फल लग रहे हैं। और उसके फल देवता खा रहे हैं। मुझे एक फल भी नहीं दे रहे हैं। मैं उनसे, फलों में कम से कम आधे मुझे देने के लिए कहने जा रहा हूँ। जाते जाते मैंने यहाँ पड़ाव किया है।"

यह सुन राजा बड़ा खुश हुआ। नाग राजा का उसके घर के आसपास पड़ाव करना उसके लिए बड़े सौभाग्य की बात थी। इस अवकाश का और लाभ उठाने के लिए राजा ने कहा—"पाताल लोकेश्वर हम दोनों राजा हैं। आपके एक लड़का है। मेरी भी एक लड़की है। इन दोनों का यदि अब विवाह कर दिया गया, तो दोनों का अवश्य लाभ होगा। आपका क्या कहना है?"

नाग राजा ने इसके लिए अपनी अनुमति दी। और कहा—"अगर यह हुआ, तो मैं अपने लड़के को आपके यहाँ छोड़कर स्वर्ग चला जाऊँगा। क्योंकि यदि देवताओं ने मेरी बात न मानी, तो सम्भव है कि युद्ध भी हो। इसका आपके यहाँ रहना अच्छा है। जब तक मैं वापिस न

आऊँ तब तक आकाश को भी एक नजर देखते रहिये।"

इसके बाद, नाग राजा, अपने नौकर चाकरों के साथ चला गया। राजा होनेवाले दामाद को अपने महल में ले आया।

कुछ दिनों बाद आकाश में बादल दिखाई दिये। बिजली कड़कने लगी। बादल गरजने लगे। मेघों के पीछे से, कटे हाथ, पैर, सिर धड़ गिरने लगे। लोग डर गये।

इतने में एक सिर नीचे गिरा। इसमें कोई सन्देह न था कि वह नाग राजा का ही सिर था। राजा डरा। देवताओं ने नाग राजा को युद्ध में परास्त कर दिया था। अगर यह बात होनेवाले दामाद को मालूम हुई, तो वह रोयेगा धोयेगा इसलिए राजा ने घर से बाहर, मैदान में चिता बनवाई और नागराज के सिर का वहाँ दहन संस्कार करवाया।

नाग राजा के लड़के ने खिड़की में से बाहर देखकर पूछा—"वहाँ, आग क्या है?" बिचारी दासी ने कहा—"क्या आप नहीं जानते हैं! देवताओंने आपके पिता का सिर काटकर नीचे फेंक दिया है। हमारे राजा उसका दहन संस्कार करवा रहे हैं।"

यह सुनते ही, नाग राजा का लड़का, भागा भागा बाहर गया और आग में कूदकर राख हो गया। कोई उसे न रोक सका।

कुछ दिन और बीते। नाग राजा स्वर्ग से नौकर चाकरों के साथ वापिस आया। राजा के हृदय की धड़कन बन्द-सी हो गई। काँपता काँपता, वह राजा के डेरे के पास गया।

"पहिले देवताओं ने कहा कि फलों में मेरा हिस्सा न देंगे। क्या मैं चुप रहता! मैंने युद्ध किया तब महेश्वर ने आकर हम

लोगों में बीच बचाव किया। वे तब आधे फल देने के लिए राज़ी हो गये। अब मेरा लड़का कहाँ है? मुझे देखने के लिए वह आपके साथ क्यों नहीं आया?" नागराज ने चारों ओर देखते हुए पूछा।

राजा ने हाथ मलते हुए कंपित स्वर में जो कुछ गुजरा था, सुना दिया।

सब सुन नागराज क्रुद्ध हो उठा। उसके मुख से आग निकलने लगी।

"क्या ऊटपटाँग बातें कर रहे हो! मैं तो जीवित हूँ न! मैं अपने लड़के को तुम्हारे भरोसे छोड़कर गया और तुमने उसे मरने दिया। उसके प्राण के बदले तुम्हारे प्राण लेकर रहूँगा।" वह चिलाया।

राजा ने साष्टाङ्ग करके कहा—पाताल लोकेश्वर! आश्रय दो आश्रय। आपका लड़का तो मर ही गया है। मेरे प्राण मत लो। जो कुछ मेरे पास है, वह सब लेलो। रक्षा करो। रक्षा करो।"

"यह क्या, उठो, उठो, सिर उठाकर मेरी ओर देखो।" नागराज का कहना सुनाई दिया।

राजा ने सिर उठाकर देखा, कोई न था। झाड़ियों के पास भी कोई न था। राजा के सामने जादूगर मात्र था।

राजा जान गया कि जो कुछ उसने देखा था वह सब जादू था। उसे इतना गुस्सा आया कि उसको उसने मार देने तक की सोची। क्योंकि उसने पहिले ही उससे अभयदान ले लिया था इसलिए वह कुछ न कर सका।

इतने शक्तिशाली राजा से उसने साष्टाङ्ग करवाया था, यह देख, जनता ने जादूगर का और भी अभिनन्दन किया।

जब आँखें खुलीं

[२]

महामन्त्री की गाड़ी क्रीड़ोद्यान में पहुँची। यह उद्यान नगर से बाहर था, एक झील के बीच में था। वहाँ तक पहुँचने के लिए एक पुल था। उद्यान के बीच में अति सुन्दर क्रीड़ा भवन था। उस अन्धेरी रात में वह भवन रंग बिरंगे दीपों से चम चमा रहा था। क्रीड़ा भवन के चारों ओर फूलों के पौधे थे, गमले रखे हुए थे, झाड़ियाँ थीं। झुरमुट था। इसलिए वह प्रदेश और भी सुन्दर बन गया था।

महामन्त्री की गाड़ी पुल पार कर भवन में पहुँचनेवाली थी कि उस समय सुन्दर गाड़ी के पीछे से उतरा, और पौधों के पीछे छुप गया। कुछ व्यक्तियों ने आकर महामन्त्री का स्वागत किया। वे सब सुन्दर नौजवान स्त्रियाँ ही थीं। वहाँ कोई आदमी न था, यह भी उसने देखा। तल्वार लेकर स्त्रियाँ ही वहाँ पहरा दे रही थीं।

महामन्त्री के उतरते ही, मुख्यमन्त्री को लेकर गाड़ी वापिस चली गई। महामन्त्री महल में जाकर बैठ गया। दासियों ने उसे पेय दिये।

फिर महामन्त्री ने आज्ञा दी—"महारानी को लाओ।" कुछ स्त्रियाँ पाल्की लेकर निकलीं। थोड़ी देर बाद पाल्की में वे एक स्त्री को लाईं। जब उस पर रोशनी पड़ी, तो सुन्दर को उसे पहिचान कर भ्रान्ति हुई, क्योंकि सिवाय उसकी पत्नी के, वह और कोई न थी।

सुब्रह्मण्यं

महामन्त्री आनन्दित हो, बाहर आया। उसका हाथ पकड़कर उसको महल में ले गया। वे क्या बातें कर रहे थे, यह सुनने की सुन्दर की उत्कट इच्छा हुई। यह देख कि पहरा देनेवाली कोई स्त्री कहीं आस पास न थी, वह महल के पास के पौधों के समीप पहुँच गया और खिड़की में से अन्दर झाँकने लगा।

महामन्त्री मायावी, और उसकी पत्नी सौफा पर बैठकर बातें कर रहे थे।

"आपके आदमी क्या कर रहे थे! आज सवेरे वह सुन्दर निर्भय हो सारा शहर घूम आया, उसको जीता जी क्यों वापिस आने दिया गया। अगर वह बाबा, मुझे हमेशा न देखता रहता, तो उसको मैं कभी का विष दे चुकी होती। हर रोज रस्सी की सीढ़ी से उतरकर आने में मेरी जान जा रही है। उस सीढ़ी का आज किसी ने मुझ से पहिले ही उपयोग किया है। मैं कब तक ये मुसीबतें झेलूँगी?" सुन्दर की पत्नी ने कहा।

"एक और सप्ताह सब्र करो, हमारी सब समस्यायें हल हो जायेंगी।" कहता महामन्त्री उठा। वह भी उठी। वे दोनों एक कमरे में चले गये।

"अरे दुष्ट कहीं का, मेरी इस तरह की स्त्री से शादी की! बाबा ने देखो, कितनी दूर की सोची थी! मेरा यह देख झुंझलाना कि उसने हम दोनों को दूर रखा है, कितना गलत था।" सोचता सोचता अन्यमनस्क हो वहीं खड़ा रहा। अन्दर की रोशनी सुन्दर पर पड़ी।

"कौन है वहाँ?" एक स्त्री की आवाज सुनाई दी। "पकड़ो, पकड़ो मारो मारो।" चारों ओर से चिल्लाना सुनाई दिया। यह चिल्लाना सुन सुन्दर,

सोचना खतम करके, सिर पर पैर रखकर, पुल की ओर भागा। कुछ स्त्रियों ने उसका पीछा किया। उनके हाथों में तलवार थीं। परन्तु सौभाग्य से सुन्दर उनके हाथ में न आया और पुल पार कर गया।

उसे क्रीड़ोद्यान की ओर से चिल्लाना सुनाई पड़ रहा था। मुझे वे इतनी आसानी से भागने नहीं देंगे। यह सोच सुन्दर छुपने की जगह देखता नगर की ओर भागने लगा।

नगर के पास ही एक धर्मशाला थी। एक समय में वहाँ भोजन दिया जाता था। बूढ़े राजा के समय, जो कोई भोजन माँगता, उसे वहाँ दिया जाता। महामन्त्री के शासन काल में यह व्यवस्था बन्द कर दी गई थी। अब वहाँ भूखे प्यासे कुली मजदूर सोया करते थे।

धर्मशाला के बाहर के चबूतरों पर कुछ को सोता देख, सुन्दर भी उनके बीच बिना हिले डुले लेट गया। न मालूम नगर के बाहर के क्रीड़ोद्यान से कैसे यह खबर पहुँची। गलियों में लोगों की ये बातें सुनकर उसे आश्चर्य हुआ—"युवराज, कहीं इधर उधर घूम रहा है। यदि उसका सिर ले गये,

है। मेरा सिर मिल जाये, और महाराज से ईनाम मिले, यह सोचकर कितने ही आधी रात के समय गलियों में घूम फिर रहे हैं। जीवन भी क्या विचित्र है, वह सोचने लगा।

इतने में उसे किसी के आने की आहट सुनाई दी। उसे ऐसा लगा कि कोई धर्मशाला की सीढ़ियों पर चढ़कर उसके पास आकर खड़ा हो गया है। सुन्दर ने सोचा कि मेरा अन्तिम क्षण आ गया है। पर जो आया था, उसे देखकर ऐसा न लगता था कि वह उसके सिर के लिए आया था। वह बड़ा डाकू था। उसे मन्त्र, यन्त्र भी आते थे। वह साल में एक बार डाका मारने के लिए निकलता, बड़े लोगों के घर में जाता। और केवल रत्न ही चुराता। सोना चान्दी उसके लिए मिट्टी के समान था। वह चोरों में राजाओं की तरह था। इसलिए जब वह चोरी करने के लिए निकलता तो, चोरी का माल ढोने के लिए साथ एक कुली भी ले जाता। वह डाकू अब कुली के लिए ही धर्मशाला में आया था।

तो सुना है कि राजा बहुत-सा सोना देगा। अच्छा मौका है।"

जल्दी ही गलियों में सरगर्मी कम हुई। सुन्दर ने सोचा कि यही अच्छा था कि वह उसी तरह लेटा रहे। वह महाराज का लड़का था, उसको गद्दी पर बैठना चाहिए था, पर उसे यूँ चबूतरे पर छुपा बैठना पड़ रहा था। मेरे राज्य का अपहरण करनेवाला, बड़ा दुष्ट, नीच और हत्यारा है। जिसका मेरे साथ विवाह हुआ है वह तो नागिन की तरह है। और तो और वह मेरे शत्रु के हाथ में कठपुतली

यद्यपि अन्धेरा था, पर चूँ कि उसने आँखों में अंजन लगा रखा था इसलिए उसको चबूतरे पर सोनेवाले साफ़ साफ़ दिखाई दिये। उन सब में सुन्दर ही हृष्ट पुष्ट माल्रम हुआ। इसलिए उसने सुन्दर को अपनी छड़ी से छुआ। उसने जब सिर उठाकर देखा, तो उसको साथ आने का इशारा किया।

सुन्दर आकर चला आया।

"कौन हो तुम!" डाकू ने पूछा।

"मैं भिखारी हूँ।" सुन्दर ने जवाब दिया।

"मेरे साथ आकर, जो कुछ मैं कहूँगा। वह करोगे? पैसा दूँगा।" डाकू ने कहा।

"मुझे तो कुछ नहीं दिखाई दे रहा है, भला मैं क्या काम कर सकूँगा।" सुन्दर ने कहा।

डाकू ने उसकी आँखों में थोड़ा-सा अंजन लगाया। उसको सब कुछ दिखाई देने लगा। वह डाकू के साथ निकल पड़ा। डाकू, सीधे सुन्दर के महल में गया। सुन्दर सोचने लगा कि देखें क्या होता है। दुर्भेद्य उस महल में डाकू आसानी से घुस गया। और बहुत-से रत्न आभरण ले कर, बाहर चला आया। आभरण सब एक थैले में थे। थैला सुन्दर को देकर उसने उसको साथ आने के लिए कहा।

दोनों, बहुत देर तक चलने के बाद नगर से बाहर पर्वतों में जाकर, एक गुफ़ा के पास पहुँचे। डाकू ने कोई मन्त्र पढ़ा। और वह पत्थर, जो गुफ़ा के द्वार पर था यकायक हट गया। जब दोनों गुफ़ा के अन्दर चले गये, तो द्वार पर, यथापूर्व पत्थर आ गया। गुफ़ा के अन्दर एक सुन्दर महल था। उसमें डाकू, अपनी पत्नी और लड़की के साथ रहता था। सुन्दर

को बाहर बरान्डे में छोड़कर, आभूषण लेकर डाकू अन्दर गया।

"आज जो कुली मुझे मिला है, वह बड़ा खूबसूरत है। नौजवान है। मुझे उसे देखते ही ऐसा लगा कि अपनी लड़की की और उसकी जोड़ी अच्छी रहेगी।" डाकू ने अपनी पत्नी से कहा।

"कुली को अपनी लड़की हम कैसे देंगे? जैसे औरों को मारा था वैसे उसे भी मार दीजिये। क्या अपनी लड़की से विवाह करने के लिए कोई नहीं मिलेगा?" पत्नी ने कहा।

माँ बाप का सम्भाषण सुनकर डाकू की लड़की ने धीमे से बाहर बरान्डे में आकर सुन्दर को देखा। तुरत उसे उससे प्रेम हो गया। उस पर तरस भी आया। वह उसका हाथ पकड़कर गुफ़ा के द्वार पर ले गई। उससे कहा—"तुम तुरत चले जाओ। नहीं तो तुम जीवित न रह सकोगे।" उसने सुन्दर को मन्त्र भी बताया। उस मन्त्र के पढ़ते ही गुफ़ा का द्वार खुल गया। सुन्दर बाहर आया, और नगर की ओर भागने लगा। डाकू की लड़की, जिसने उसके प्राणों की रक्षा की

थी, वह बहुत सुन्दर थी। उसके सौन्दर्य और उसके सद्व्यवहार को वह भूल न सका।

बहुत दूर जाने के बाद सुन्दर ने कहीं विश्राम लेने की सोची। वह एक घर के सामने के चबूतरे पर बैठ गया। उसे उस घर में कुछ आहट सुनाई दी। अभी सवेरा होने में कुछ देरी थी। "इस समय, अब इस घर में क्या गड़बड़ी हो रही है!" सुन्दर को आश्चर्य हुआ।

वह यों सोच रहा था, कि कुछ ब्राह्मण समिधायें, और एक घड़े में घी और चीज़ें लेकर, उस घर में आये। सुन्दर ने उनसे पूछा—"क्यों! क्या बात है!"

"यह घर सोमयाजी का है। ज्योतिषियों ने बताया है कि आज प्रातःकाल हमारे राजकुमार पर साँप के कारण आपत्ति आनेवाली है। सोमयाजी सर्प यज्ञ करके वह आपत्ति हटाने का प्रयत्न कर रहे हैं। वे विचारे स्वयं यज्ञ क्या कर सकेंगे! इसलिए हम पांच छः घर घूमघामकर ये सब चीज़ें जमाकर लाये हैं। राजकुमार के लिए हम नगरवासी प्राण तक देने को तैयार हैं। हम सब उन्हीं पर जाने कितनी आशायें लगाये बैठे हैं।" ब्राह्मणों ने सुन्दर से कहा।

"क्या मैं भी अन्दर आकर यह यज्ञ देख सकता हूँ!" सुन्दर ने कृतज्ञता पूर्वक पूछा।

"हाँ, आओ, बेटा, ज़रूर देख सकते हो। यह सोच कि यदि महामन्त्री को मालूम हो गया, तो वह यज्ञ भंग कर देंगे इसलिए हम यों रहस्यपूर्वक यह यज्ञ कर रहे हैं। नहीं तो बात तो यह ऐसी है जिसमें हमें सब नगरवासियों को निमन्त्रित करना चाहिए था।" ब्राह्मणों ने कहा।

वह एक एक बात सुनता गया, तो सुन्दर को अपनी जिम्मेवारियों के बारे में और भी अच्छी तरह मालूम हुआ। प्रतिक्षण उसका उत्तरदायित्व बढ़ता जाता था। वह लज्जित हुआ कि तब तक वह अपनी जिम्मेवारियों की उपेक्षा करता आया था। वह भी ब्राह्मणों के साथ एक कोने में जाकर बैठ गया।

अन्दर हवनकुण्ड तैयार किया गया। उसमें घी आदि डालकर अग्नि की ज्वाला तैयार की गई। हवनकुण्ड के चारों ओर बैठे ब्राह्मण मन्त्रोचारण करने लगे।

यकायक छत पर से सुन्दर के सिर पर कुछ लगा। और फिर हवनकुण्ड में इस तरह गिरा, जैसे किसी ने कुछ फेंका हो। वह एक बड़ा नाग था।

ब्राह्मणों ने मन्त्रोच्चारण बन्द कर दिया। चकित हो, वे सुन्दर की ओर देखने लगे। एक ज्योतिषी ने बाहर जाकर अन्दर आकाश की ओर देखा। और उसने आकर कहा—"वह क्षण गुज़र गया है।"

ब्राह्मणों ने सुन्दर के समीप आकर पूछा—"बेटा, छुपाओ मत, क्या तुम ही हमारे युवराज हो!"

सुन्दर ने उनके पैरों पर पड़कर कहा—"मैं युवराज हूँ, और मैं आप लोगों का कुछ भी न कर सका। मगर आपने मुझ पर आनेवाली आपत्ति से मेरी रक्षा की। आप ही मेरे लिए पिता के समान हैं। मैं आपका लड़का हूँ। जो कुछ आप कहेंगे, वह मैं करने के लिए तैयार हूँ।

"शीघ्रमेव राज्य प्राप्तिरस्तु" ब्राह्मणों ने सुन्दर को आशीर्वाद दिया।

आशीर्वाद लेकर, जब वह अपने घर पहुँचा, तो पूर्व में प्रातःकाल हो रहा था। तब तक बाबा उठ चुका था, और चिन्तित

था कि युवराज को क्या हो गया था। इसके साथ उसे यह भी मालूम हुआ कि महल में चोरी हो गई थी।

वह सोचने लगा कि यह महामन्त्री की ही करतूत है। मैं अब तक राजकुमार की रक्षा के लिए इतने प्रयत्न करता आया हूँ, वे सब बेकार गये। युवराज शायद जीवित मुझे न मिले; बूढ़ा इसी चिन्ता में डूबा जाता था। इसी समय सुन्दर घर वापिस आ गया। बाबा की जान में जान आई।

"बेटा, मुझे बिना बताये रात को तुम कहाँ चले गये थे?" बाबा ने पूछा।

"ये बातें बाद में बताऊँगा। तुम पहिले जाकर मुख्यमन्त्री को बुलाकर लाओ।" सुन्दर ने कहा।

यह जानते ही कि युवराज ने बुलाया है, मुख्यमन्त्री आया। "आप ने मुझे बुलाया है। क्यों!" उसने सुन्दर से पूछा।

"कल रात, आपने महामन्त्री को वचन जो दिया है कि एक सप्ताह में मेरा सिर लाकर देंगे। इसीलिए ही बुलाया है।" सुन्दर ने कहा।

मुख्यमन्त्री ने सुन्दर के पैरों पर पड़कर कहा—"महाराज, क्षमा कीजिये। मैं उस

दुष्ट के साथ नहीं रह सकता, मैं कहीं भागने की सोच रहा हूँ। क्या आप सोचते हैं कि सचमुच मैं आपका अपकार करूँगा।"

"कहीं भागने की जरूरत नहीं है। राजद्रोह के अपराध पर उस महामन्त्री को और उसकी रखैल को पकड़कर लाने के लिए तुरत सैनिकों को भेजो। आज से मैं राजा हूँ, और आप महामन्त्री हैं। आज दरबार में आकर उन राजद्रोहियों का मुकदमा सुनूँगा और सजा दूँगा।" सुन्दर ने रौब से कहा।

उस दिन प्रातःकाल जब दरबार प्रारम्भ हुआ, तो सैनिक महामन्त्री और उस स्त्री को, जो युवरानी के रूप में जी रही थी, जंजीरों से बाँधकर लाये। सुन्दर अपने बीस मित्रों के साथ आया। वह पहिली बार अपने सिंहासन पर बैठा। राजद्रोह का मुकदमा चला। उनको मृत्युदण्ड दिया गया।

यह खबर जल्दी ही सारे शहर में फैल गई। जनता में जो उल्लास और प्रसन्नता देखी गई, उसकी कोई सीमा न थी। प्रत्येक घर में उत्सव मनाये गये।

उसी दिन कुछ सेना को साथ लेकर, सुन्दर डाकू की गुफा के पास गया। क्योंकि वह द्वार खोलने का मन्त्र जानता था, इसलिए वह आसानी से अन्दर चला गया।

डाकू ने सोचा कि उसको मौत की सजा दी जायेगी। पर सुन्दर ने उसका कुछ न किया।

"तुम चोरी का माल लोगों में बाँट दो, और मेरे साथ अपनी लड़की का विवाह कर दो—यह कहने के लिए मैं तुम्हारे पास आया हूँ। पिछली रात मैंने ही तुम्हारे कुली का काम किया था। तुम्हारी लड़की ने जो मेरे प्रति आदर दिखाया, मैं उसे नहीं भूल सकता।" सुन्दर ने कहा।

इसके बाद सुन्दर ने शासन व्यवस्था में सुधार किये। दान धर्म पहिले की तरह होने लगे। धर्मशालाओं में फिर जान-सी आ गई। जिन ब्राह्मणों ने सर्प यज्ञ किया था, उन्होंने ही आकर सुन्दर का राज्याभिषेक और विवाह सम्पन्न किया। उनको भी अनन्त धनराशि दक्षिणा में दी गई।

सुन्दर, प्रजा के सुख दुःख अपने समझकर, पत्नी के साथ आराम से रहने लगा।

अक्षयपात्र

विक्रमार्क ने अपना हठ न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतार कर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, कई को छोटे मोटे काम के लिए बहुत मेहनत करनी पड़ती है, और कई जैसा कि शुभदत्त था, आसानी से भाग्य देवता के प्रेम पात्र हो जाते हैं। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" कहकर उसने इस प्रकार कहानी सुनानी शुरु की।

शुभदत्त बड़ा गरीब था। वह रोज जंगल जाता। वहाँ गट्ठर भर लकड़ियाँ काट लाता और उन्हें बेचकर, अपना निर्वाह करता। एक दिन जंगल में वह बहुत दूर निकल गया। उसे वहाँ चार आदमी दिखाई दिये। वे मामूली आदमी न थे।

बेताल कथाएँ

ये यक्ष थे। उनके वस्त्र, और आभूषण देख लकड़हारा शुभदत्त हैरान रह गया।

उन यक्षों को उसका भय विस्मय देखकर उस पर तरस आया। उन्होंने उससे कहा—"क्या तुम हमारी सेवा करते यहीं रह जाओगे? यह हमारी जिम्मेवारी रहेगी कि तुम्हें, और नगर में तुम्हारे कुटुम्ब को कोई हानि न हो।" शुभदत्त, जो वह काम देंगे वह करने के लिए तैयार हो उनके साथ रहने के लिए मान गया।

उसकी सहायता से उन्होंने स्नान किया। भोजन का समय आया। उन्होंने उसको एक हंडा दिखाकर कहा—"इस हंडे में से भोजन लेकर हमें परोसो।" शुभदत्त ने जब हंडा देखा, तो वह खाली था। उसे न सूझा कि क्या करे।

यक्ष उसको उस हालत में देख हँसी न रोक सके। उन्होंने उससे कहा—"भाई, यह मामूली हंडा नहीं है। अक्षय पात्र है। उसमें हाथ डालकर जो माँगोगे वह हाथ में आ जायेगा। हाथ रखकर देखो।"

शुभदत्त ने हंडे में हाथ डालकर, जैसा कि उन्होंने कहा था, जो कुछ चाहा, उसे निकाला। पहिले यक्षों ने भोजन किया। फिर शुभदत्त ने भी भोजन किया। उसके बाद वह यक्षों की बड़ी भक्ति और श्रद्धा से सेवा करने लगा। यक्षों ने भी उसको कुटुम्ब को कोई कमी न होने दी। उसके कुटुम्ब को, जो उसके लिए चिन्तित था सपनों में आश्वासन देने लगे।

इस प्रकार एक मास बीत जाने के बाद यक्षों ने शुभदत्त से कहा—"अरे भाई, महीनेभर तुमने हमारी खूब सेवा की। हम तुमसे प्रसन्न हैं। जो कुछ चाहते हो, माँगो, हम देने के लिए तैयार हैं।"

"यदि आप सचमुच मुझसे प्रसन्न हैं तो यह अक्षयपात्र मुझे दीजिए।" शुभदत्त ने कहा।

यक्षों ने हंसकर कहा—"अरे पगले, क्यों ऐसा हंडा माँगते हो जो टूट सकता है। इससे अच्छी टिकाऊ चीज, जिससे और अधिक सुख मिल सकता हो, माँगो।"

"नहीं मुझे यह हंडा ही दीजिये।" शुभदत्त ने कहा। यह देख कि वह उसे ही चाहता था। उसे वह अक्षयपात्र देकर उसे उन्होंने घर भेज दिया।

एक मास बाद घर वापिस आये हुए शुभदत्त को देख, उसके बन्धु सम्बन्धी बड़े खुश हुये। शुभदत्त ने उस अक्षयपात्र को, कई हंडियों के बीच में बिना किसी को बताये रख दिया। फिर उस हंडे में से तरह तरह की खाने की चीजें, पीने की चीजें ले कर, जो कोई उसे देखने आता, उसे वह परोसता।

उसके बाद, वह अपने बन्धुओं को बुलवाकर रोज दावत देता। सब को आश्चर्य था कि कैसे अचानक वह इतना धनी हो गया था। परन्तु वास्तविक रहस्य न जान सके।

जब वह एक दिन शराब के नशे में था। उसके बन्धुओं ने पूछा—"अरे तुम तो लकड़ियों को काटकर गुजारा करते थे न। और अब तुम ये दावतें कैसे देने लगे हो! इसका रहस्य क्या है!"

शुभदत्त तो नशे में था ही। उसे यह बात सुनकर खुशी हुई। उसने यक्षों के दिये हुये अक्षयपात्र के बारे में मुख से कुछ न कहा, बल्कि झूमता यक्षों के अक्षयपात्र को कन्धे पर रख नाचता उनके पास आया। वह लड़खड़ाया और नीचे गिर गया। हंडे के भी टुकड़े टुकड़े हो

गये। क्योंकि महिमावाला हंड़ा था। इसलिए टुकड़े भी कहीं न रहे, वे भी अदृश्य हो गये। शुभदत्त की सम्पन्नता जैसे शुरु हुई थी, वैसे ही समाप्त हो गई। बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, यह तो साफ़ ही है कि शुभदत्त परम मूर्ख है। परन्तु उसकी मूर्खता किस बात में है। क्या इसमें है कि यक्षों के मना करने पर भी उसने वह पात्र माँगा, या इसमें कि बन्धुओं के समक्ष उसका रहस्य न रख पाने में या इसमें कि शराब के नशे में, उसे कन्धे पर रखकर नाचने में—इन प्रश्नों का उत्तर तुमने जानबूझकर न दिया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

इसपर विक्रमार्क ने कहा—शुभदत्त की मूर्खता, उसकी दरिद्रता में ही है। पेट भर खाना, और जो कुछ चाहे, वह सब पाना, उसके जीवन में कभी न हुआ था। उसके जीवन में इससे बढ़कर कोई और आनन्द भी न था। वह आनन्द उसे अक्षयपात्र में स्पष्ट दिखाई दिया। इसलिये उसने यक्षों की न सुनी, और उस अक्षयपात्र को ही माँगा। वह जिस स्थिति में था, उसमें यह करना स्वाभाविक भी था। उसने हंडे को रहस्यपूर्वक रखने का प्रयत्न किया। पर जब बन्धुओं ने सहानुभूतिपूर्वक पूछा तो अपनी खुशी में हिस्सा देने के लिए वह पात्र लाया। इसमें भी कोई मूर्खता नहीं है। जब उस पात्र को कन्धे पर रख लिया था, तो नाचने में भी कोई मूर्खता नहीं है। अक्षयपात्र के मिलने से पहिले की गरीबी ने ही उसे मूर्ख बना दिया था।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और फिर पेड़ पर जा बैठा। — —(कल्पित)

परिवर्तन

पाटलीपुत्र नाम के महानगर में शान्डिल्य नाम का ब्राह्मण रहा करता था। वह बड़ा गरीब था। वह पढ़ना लिखना भी न जानता था। शान्डिल्य पुरोहिती करके भी पेट न भर सका। भोजन के लालच में बौद्ध मठ में प्रवेश करके वह बौद्ध सन्यासी हो गया। परन्तु बौद्ध सन्यासी प्रति दिन एक बार ही भोजन करते हैं इसलिए बौद्ध सन्यासी होने पर भी उसको पेट भर भोजन न मिलता; उसने बौद्ध सन्यासी का वेष उतार डाला, और एक स्वामी के पास जाकर आश्रय लिया। स्वामियों को खूब भिक्षा मिलती है। उनके शिष्यों को भोजन की कमी नहीं होती इसलिए ही शान्डिल्य ने यह काम किया था। शान्डिल्य ने जिस स्वामी का आश्रय लिया था, वह बड़ा ज्ञानी और योगी था।

एक दिन सवेरे गुरु और शिष्य नगर में घूमते घूमते एक बड़े बाग के पास आये रास्ते भर शान्डिल्य भिक्षा के बारे में, भोजन के बारे में इस तरह बकता रहा, जैसे उनके लिए मरा जा रहा हो। परन्तु स्वामी जी उसकी बातें चुपचाप सुनते रहे। शान्डिल्य मूर्ख भी था। उद्यान को देखते ही स्वामी ने पीछे हटकर कहा—"तुम चलो।" शान्डिल्य ने कहा—"मुझे डर लगता है। अशोक के पेड़ के पीछे शेर छुपा रहता है। पहिले आप चलो।" "बढ़ो, तुम्हारे सब सन्देह निवारण हो जायेंगे।" स्वामी ने कहा। "पहिले भोजन के बारे में कुछ करना होगा" शिष्य ने कहा।

उसी नगर में वसन्तसेना नाम की वेश्या रहा करती थी। उसका एक प्रेमी था, जिसका नाम रामिलिक था। उसने उसको

पल्लव महेन्द्रवर्मा का नाटक

उस समय उद्यान में आने के लिए खबर भेजी थी। इसलिए वसन्तसेना सहेलियों को लेकर उस समय उद्यान में आई। परन्तु रामिलिक न आया। वह अपने जुआखोर दोस्तों से मिलने गया और वह समय पर न आ सका। रामिलिक को बुलाकर लाने के लिए वसन्तसेना ने अपनी सहेलियों में से एक को जिसका नाम मुघरिता था, भेजा। केवल परमृतिक नाम की सहेली ही उसके साथ रह गई थी।

वसन्त ऋतु थी। उद्यान की शोभा निराली थी। वसन्तसेना उत्साह में जोर से गाने लगी। यह गाना सुन शान्डिल्य को बड़ा जोश आ गया। उसने अपने गुरु से भी संगीत का आनन्द लेने के लिए कहा। स्वामी ने जब संगीत के लिए कोई इच्छा न दिखाई, तो शान्डिल्य, वसन्तसेना के पास गया। उसे देखता, संगीत सुनता, वह मुँह बाये खड़ा रहा।

वसन्तसेना ने गाना बन्द कर दिया। वह अपनी सहेली, परमृतिक से बातें करने लगी। उसकी बातों से मालूम हो गया कि वह वेश्या थी। शान्डिल्य ने सोचा कि यदि उसके पास पैसा होता, तो उसको उसका प्रेम मिलता।

इतने में वहाँ यम का अनुचर आया। वसन्तसेना की आयु समाप्त हो गई थी। इसलिए यम ने उसको लिवा लाने के लिए अपना अनुचर भेजा था। वह एक तरफ खड़ा था।

वसन्तसेना अशोक की कोपलें तोड़ने के लिए उठी। "मैं तोड़ देती हूँ। तुम ठहरो।" परमृतिक के कहने पर भी वह न मानी। वसन्तसेना जब उछल उछलकर कोपलें तोड़ने लगी तो यम के अनुचर ने साँप का रूप धारण कर उसको काटा।

जब वसन्तसेना को मालूम हुआ कि सांप ने उसको काटा था तो वह ज़ोर से चिल्लाई। वह छटपटाने लगी। परभृतिक घबरा गई। यह शोर सुन शान्डिल्य पास आया। जो कुछ गुज़रा था उसने गुरु के पास जाकर कहा। "शायद कर्म समाप्त हो गया है।" स्वामी ने निश्चित होकर कहा। शान्डिल्य को गुरु पर क्रोध आया और वसन्तसेना जिस जगह थी वहाँ चला आया।

वसन्तसेना की मृत्यु समीप आ गई थी। उसने अपनी माँ को नमस्कार करके रामिलिक को अपना प्रेम जताकर प्राण छोड़ दिये। उसके मर जाने पर शान्डिल्य ज़ोर से रोने लगा।

वह देखने में साधु मालूम होता था। और एक ऐसे व्यक्ति के लिए रो रहा था, जिसको वह जानता तक न था। परभृतिक ने उसे देख सोचा "शायद कोई दयालु है।" उसको वसन्तसेना के पास रहने के लिए कह वह वसन्तसेना की माँ के पास गई।

शान्डिल्य, वसन्तसेना की शुश्रुषा करने लगा। उसे खेद हुआ कि जब वह जीवित थी, तब वह उसे छू न सका था। उधर स्वामी बुला रहा था, उसे अध्ययन करने के लिए कह रहा था। पर उसकी बातें शान्डिल्य सुनता न मालूम होता था। स्वामी ने सोचा कि वसन्तसेना के कारण शान्डिल्य की बुद्धि बिल्कुल भ्रष्ट हो गई थी। यदि उसकी बुद्धि बदलनी है तो वसन्तसेना के द्वारा ही वह बदली जा सकती है।

स्वामी महायोगी था। उसने अपना शरीर छोड़ दिया। और वसन्तसेना के शरीर में प्रविष्ट हुआ। मृत वसन्तसेना

का हिलना डुलना, उठकर बैठ जाना, देख शान्डिल्य बड़ा खुश हुआ।

"शान्डिल्य, शान्डिल्य" बसन्तसेना ने पुकारा।

"मैं यहाँ हूँ।" कहता शान्डिल्य उसके और पास गया।

"हाथ पैर धोकर आओ। तब तक तुम मुझे नहीं छू सकते।" बसन्तसेना ने कहा।

"अरे वाह, यह कितनी पवित्र है।" शान्डिल्य ने मन ही मन सोचा। उसे यह न मालूम था कि स्वामी ही ये सब बातें कर रहा था।

"शान्डिल्य, अध्ययन करो।" बसन्तसेना ने उसे आज्ञा दी।

"क्या इसे भी गुरु का पागलपन हो गया है।" शान्डिल्य ने सोचा। वह बसन्तसेना को छोड़कर, गुरु जहाँ था, वहाँ गया।

गुरु का शरीर एक पेड़ के पास पड़ा था। वह निरा-काठ-सा था। उसमें प्राण न थे। "अरे गुरु तो गुज़र गये हैं।" शान्डिल्य रोने लगा।

इस बीच वसन्तसेना की माँ, यह सुन कि उसकी लड़की साँप के काटने के कारण मर गई थी जहाँ वसन्तसेना थी वहाँ आई। पर जब उसने अपनी लड़की को खड़ा देखा तो "भगवान" सोचती, "बेटी, वसन्तसेना" पुकारती उसके पास गई।

"अरे बूढ़ी, मुझे मत छुओ। दूर जाओ।" वसन्तसेना में प्रविष्ट स्वामी ने कहा।

लड़की की बात सुनकर वसन्तसेना की माँ को आश्चर्य हुआ। "अरे, यह क्या हो गया!" परभृतिक ने यह सोच कि कहीं शायद विष सिर में न चढ़े वैद्य के पास खबर भेजी।

इसी समय, मधुरिता, वसन्तसेना के प्रेमी रामिलिक को साथ लेकर वहाँ आई। "कहाँ है, मेरी प्यारी वसन्तसेना।" कहते रामिलिक ने वसन्तसेना का आँचल पकड़ लिया।

"आँचल छोड़ दो। काला कलूटा कहीं का।" वसन्तसेना के यों झिड़कने पर रामिलिक को अचरज हुआ। "यह क्या है?" परभृतिक से पूछा।

वसन्तसेना ने कहा। वैद्य ने चकित होकर अपने से भी अच्छा एक वैद्य बुलाकर लाने के लिए कहा।

और इधर, वसन्तसेना के प्राण लेकर, भयंकर अनुचर यम के पास गया, तो यम ने उसे बुरी तरह डाँटा फटकारा। उसको इस वसन्तसेना के प्राण नहीं लाने चाहिये थे, एक और वसन्तसेना के प्राण लाने चाहिए थे। "इसके प्राण, इसके शरीर में डालकर, दूसरी वसन्तसेना के प्राण लाओ।" यम ने अनुचर को आज्ञा दी।

वसन्तसेना साँप के काटने के कारण गिर गई थी और जब से उठी है तब से यों पागलों की तरह बातें कर रही है, परभृतिक ने कहा।

इतने में वैद्य यह पूछता आया— "कहाँ है वह?" परभृतिक ने वसन्तसेना को दिखाया। वैद्य चतुर था। वसन्तसेना को देखते ही, वह जान गया कि वह साँप को देखकर डर गई थी और उसको साँप ने काटा भी था। वह अपना सामान निकालकर मन्त्र पढ़ने लगा। "अरे पगले वैद्य, बस कर, बस कर!"

यदि देरी की गई, तो वसन्तसेना का दहन संस्कार भी हो जायेगा। यह सोच, यम का अनुचर वसन्तसेना के प्राण लेकर पहुँचा। पर तब तक, वसन्तसेना के शरीर में एक और प्राण देखकर, यम का अनुचर घबरा उठा।

यम का अनुचर जान गया कि वसन्तसेना के शरीर में महाज्ञानी था। अब क्या करना होगा? अपने पास के प्राण किसी और शव में डालकर उसको दूसरी वसन्तसेना के प्राण लेकर यम के पास जल्दी जाना था।

यम के अनुचर को न सूझा कि क्या करे, वह वसन्तसेना के प्राण, स्वामी के शरीर में रखकर अपने काम पर चला गया।

स्वामी उठकर चिल्लाने लगा— "परभृतिक, परभृतिक!" यह आवाज वसन्तसेना की थी।

परन्तु पास खड़े शान्डिल्य ने सोचा— "वाह, स्वामी जी भी उसमें हैं।"

"रामिलिक कहाँ है!" स्वामी के शरीर में स्थित वेश्या ने पूछा। "क्या, स्वामी," रामिलिक पास आया।

"मुझे पकड़ो। रामिलिक, पास आओ।" स्वामी को प्रेम पूर्वक पुकारता देख उसको आश्चर्य हुआ। स्वामी का व्यवहार ऐसा था कि उसे वसन्तसेना की याद आ रही थी। उसने रामिलिक से पूछा— "आज तुमने इतनी देरी क्यों की!" वसन्तसेना ने माँ को देखकर कहा— "माँ, मैं यहाँ हूँ। आओ न।" और उधर, वसन्तसेना ठीक स्वामी की तरह बोल रही थी।

नया वैद्य आठ औषधी की सलाइयाँ लाया। उस वैद्य को भी उसने हैरान कर
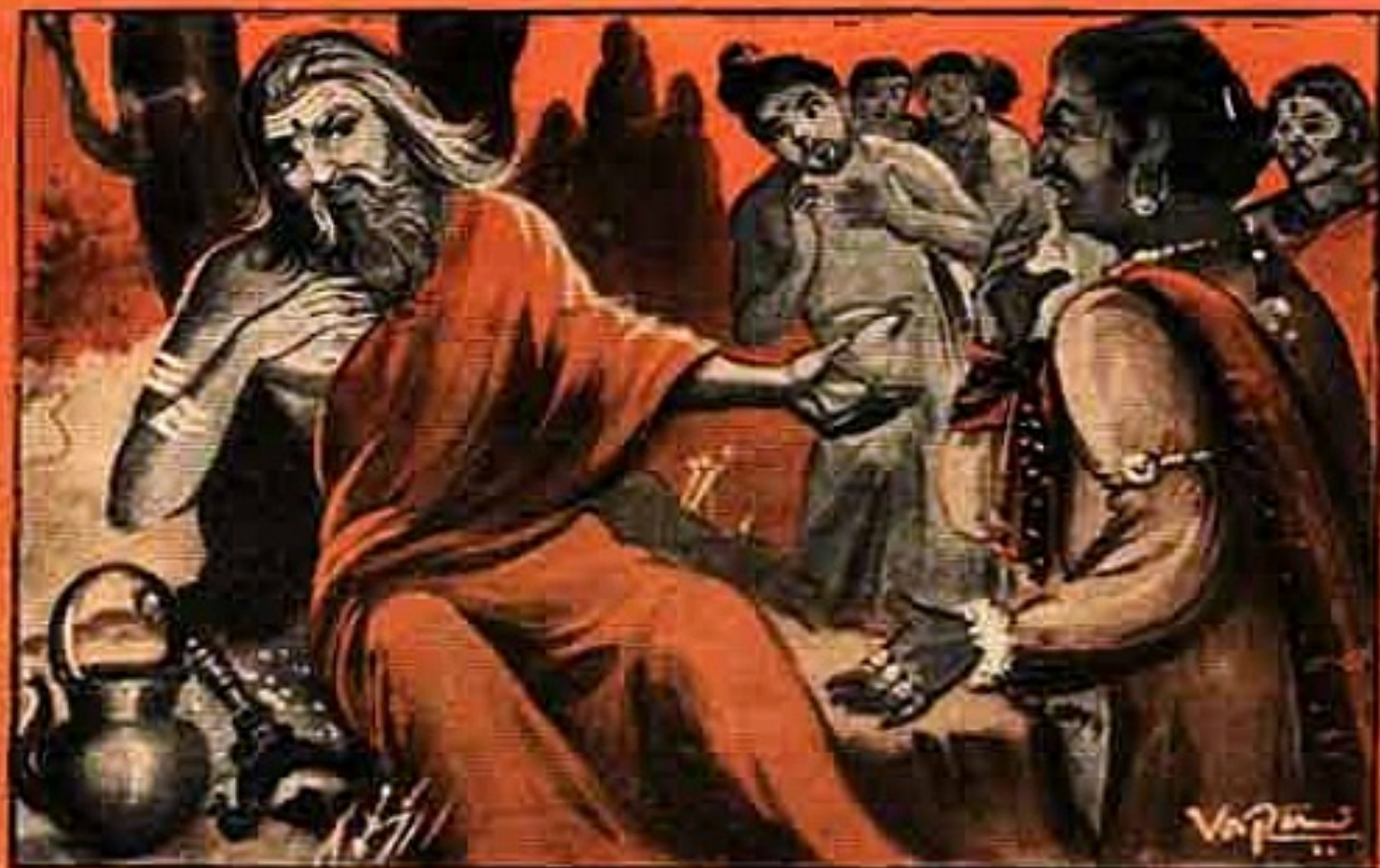
दिया। "जानते हो" मुझे किस जाति के साँप ने काटा है! क्या तुम शास्त्र जानते हो! उस पर रौब जमाया। जब उसने जो कुछ उसे मालूम था उसे बताया, तो उसने उस में त्रुटियाँ दिखाईं। उसने पूछा कि विष कितने प्रकार का होता था।

"यह व्याधि हमसे ठीक नहीं हो सकती।" नये वैद्य ने कहा।

यम का अनुचर फिर आया। उसका काम अभी समाप्त न हुआ था। वसन्तसेना के प्राण अभी वसन्तसेना के शरीर में न पहुँचे थे। यह करने की जिम्मेवारी यम के अनुचर की थी।

उसने वसन्तसेना को नमस्कार करके कहा—"स्वामी, अब तुम्हें यह शरीर छोड़ना होगा।"

वेश्या के शरीर में स्थित स्वामी ने कहा—"अच्छा।" जब उसने योग के कारण अपने प्राण, वसन्तसेना के शरीर से अलग किये, तो स्वामी के शरीर में स्थित वेश्या के प्राण लेकर उसके शरीर में पहुँचा दिये। स्वामी के प्राण भी उसके शरीर में चले गये। यम का अनुचर चला गया।

तब जाकर, वसन्तसेना वसन्तसेना की तरह बोलने चालने लगी। उसने अपनी माँ को, रामिलिक और सहेलियों को हमेशा की तरह पुकारा।

जब स्वामी भी, वेश्या की तरह न बात करके स्वामी की तरह बातें करने लगा, तो शान्डिल्य बड़ा खुश हुआ। "स्वामी, यह भी क्या प्रहसन है! क्यों ऐसा हुआ?" उसने पूछा।

"सूर्यास्त हो रहा है। सब फ़ुरसत से बताऊँगा। चलो चलें।" कहता, स्वामी शिष्य के साथ चला गया।

वह किसान जो राजा बना

फ्रिजिया देश में गोर्डियस नाम का एक किसान युवक रहा करता था। वह एक दिन अपनी बैल गाड़ी लेकर शहर के लिए निकला।

जब गाड़ी थोड़ी दूर गई, तो न मालूम कहाँ से एक गरुड़ पक्षी आया, और बैलों के बीच जुवे पर बैठ गया। ग्रीक लोगों में यह शुभ शकुन समझा जाता है। गोर्डियस सोचने लगा कि उसका किस तरह शुभ होने जा रहा था।

इस समय केलिस्सस नगर में राजा यकायक मर गया। राज्य में अराजकता फैल गई। उसी समय, एक भक्ता समाधिस्थ-सी हो गई, और उसने उत्तेजित प्रजा से कहा।

"तुम्हारा राजा, बैल गाड़ी पर चढ़कर इसी ओर चला आ रहा है। गाड़ी में उसके पास उसकी रानी भी बैठी है। गाड़ी के जुवे पर गरुड़ पक्षी भी बैठा है।" यह विवरण मिलते ही प्रजा बड़ी खुश हुई, और नये राजा की प्रतीक्षा करने लगी।

परन्तु भक्ता की ये बातें सुनकर एक युवती जल्दी जल्दी नगर से बाहर भागी।

थोड़ी दूर जाने के बाद एक बैल गाड़ी दिखाई दी। उसके जुवे पर एक गरुड़ बैठा था। गाड़ी में एक नौजवान था। परन्तु उसकी बगल में कोई न था।

नगर से आई हुई युवती ने गाड़ी के सामने आकर गोर्डियस से कहा—"ठहरो, ठहरो, मुझे भी जरा गाड़ी में चढ़ने दो।" गोर्डियस ने गाड़ी रोकी, और उसको अपनी बगल में गाड़ी में बिठा दिया।

"देखो, यदि तुमने यह प्रतिज्ञा की कि तुम मुझ से विवाह करोगे, तो शाम

तक तुम्हारे लिए बहुत शुभ घटना घटेगी।" युवती ने कहा।

गोर्डियस ने तो तभी निश्चय कर लिया था, जब उसने गरुड़ देखा था, कि उसका भाग्य खिलनेवाला था। इसलिये उसको उसकी बात पर आश्चर्य न हुआ। उसकी ओर थोड़ी देर तक देखकर कहा—"यदि तुम में सौन्दर्य के समान बुद्धि हो, तो तुम्हारे साथ विवाह करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

"मेरी बुद्धियत्ता के विषय में तुम कोई सन्देह न करो।" उसने तब वे बातें गोर्डियस को बताईं, जो भक्ता ने समाधिस्थ होकर कही थीं। "यदि मैं गाड़ी पर तुम्हारे साथ न आऊँ तो तुम राजा ही न बनोगे।" उसने कहा।

गोर्डियस ने स्वीकृति की सूचना में सिर हिला दिया, और गाड़ी चलानी शुरु कर दी। अभी अन्धेरा न हुआ था कि गाड़ी नगर में घुसी। बैल गाड़ी उसके जुवे पर गरुड़ पक्षी और गाड़ी में एक युवक और युवती जब दिखाई दिये तो लोग उत्साह में "राजा, राजा" जय जयकार करने लगे। इस प्रकार गोर्डियस केल्विसस नगर का राजा हो गया। जिस जुवे और बैलों की रस्सी के कारण उसका भाग्य खिला था, उसकी गाँठ बान्धकर, उसने देवालय में ईश्वर को अर्पित कर दी। उसने कहा—"जो कोई इस गाँठ को खोलेगा वह सम्राट होगा।"

गोर्डियस ने जो विचित्र गाँठ बाँधी थी, वह किसी से न खोली जा सकी। जिसने विश्व विजय की सोची थी, उस सिकन्दर से भी वह गाँठ न खुली, यद्यपि उसे खोलने की उसने बहुत कोशिश की। जब वह न खुली, तो निराश होकर उसने उसे तलवार से काट दिया।

लोभ का अन्त नहीं है!

एक गांव में दो बचपन के दोस्त रहा करते थे। उनमें से एक, जब वह बीस वर्ष का था हिमालय गया। वहाँ उसने योगियों और सिद्धों की सेवा करके उनसे कुछ शक्तियाँ पाईं। दस वर्ष बाद वह फिर अपने गाँव वापिस आया। ग्रामवासियों ने उसका आदर करके ग्राम के बाहर, आम के बगीचे में उसके रहने के लिए एक घर बनवाकर दिया।

धीमे धीमे उसकी शक्तियों के बारे में आसपास के गाँव वालों को भी मालूम हो गया। जब कभी उनको कोई शारीरिक व्याधि होती तो वे योगी के पास आकर ठीक करवा लेते। योगी के बचपन के दोस्त को, जो कहीं कुली मजदूरी करके जिन्दगी बसर कर रहा था, ये सब बातें कुछ दिनों बाद मालूम हुईं। वह तुरत गाँव आया, और बचपन के दोस्त से मिला।

"तुम्हें क्या सहायता चाहिए?" योगी ने अपने बचपन के दोस्त से पूछा।

"मैं बड़ा गरीब हूँ। यदि तुमने थोड़ा बहुत पैसा दिया, तो मैं भी जिन्दगी आराम से काट लूँगा।" दोस्त ने कहा। योगी ने वहाँ पड़े कंकड़ की ओर छोटी अँगुली से दिखाते हुए कहा—"जाओ, ले जाओ। उस सोने को।"

"नहीं भाई, यह तो काफी नहीं है।" दोस्त ने कहा।

योगी ने वहाँ पड़े एक बड़े पत्थर को छोटी अँगुली से दिखाते हुए कहा—वह ही सोना है, उठा ले जाओ।

"नहीं, यह काफी नहीं है।" दोस्त ने कहा।

"तो क्या चाहिए?" योगी ने पूछा।

"तुम्हारी छोटी अंगुली ही चाहिए।" दोस्त ने कहा।

ऋश्यशृंग आकर, दशरथ का अतिथि होकर रहा। कुछ दिन बीत गये। वसन्त ऋतु आई। दशरथ ने ऋश्यशृंग से कहा—"अब आप यज्ञ शुरु करवाइये।" ऋश्यशृंग मान गया।

अश्वमेघ यज्ञ के लिए बड़े पैमाने पर तैयारियाँ होने लगीं। यज्ञों के संचालक वेद पठन के लिए सुयज्ञ, वामदेव, जाबाली, काश्यप आदि मुनि और ब्राह्मण प्रवर बुलाये गये।

वशिष्ठ आदि ने यज्ञ के लिए आवश्यक वस्तुओं का निर्देश किया। समर्थ व्यक्तियों को घोड़े के साथ भेजा गया। सरयू नदी के उत्तरी तट पर यज्ञशाला बनाई गई। यज्ञशाला के निर्माण में बढ़ई, राज, चित्रकार नाट्यशास्त्र में प्रवीण लोग नियुक्त किये गये। यज्ञ में शामिल होनेवाले राजाओं के लिए महल बनवाये गये। ब्राह्मणों के लिए कुटीरों की व्यवस्था की गई। भोजन आदि के लिए बड़े-बड़े पंडाल बनाये गये।

सब राजाओं को, सभी वर्ण वालों को यज्ञ में निमन्त्रित किया गया।

मिथिला के राजा जनक, काशी के राजा, दशरथ के ससुर केकेय महाराजा और रोमपाद को विशेषतः निमन्त्रित किया

गया। कई राजाओं को सुमन्त्र ने स्वयं आकर निमन्त्रण पत्र दिया। जिनको आना था, वे सब अतिथि गृहों में आ गये।

अच्छा दिन देखकर, शुभ मुहूर्त में दशरथ यज्ञशाला की ओर निकला। यज्ञ आरम्भ हुआ। पहिला हविर्भाग इन्द्र को अर्पित किया गया।

यज्ञशाला अतिथि अभ्यागतों से भरी थी। खूब भोजन परोसा गया। सबको वस्त्र भी दान में दिये गये। और भी दान किये गये।

अश्वमेघ यज्ञ तीन दिन तक चलता रहा। उसके शास्त्रोक्त रीति से समाप्त होने के बाद राजा ने यज्ञ के संचालक ऋत्विजों को सारी भूमि दान में दे दी।

उन्होंने राजा से कहा—"महाराज, भूमि का परिपालन हमारे बस की बात नहीं है। इसलिए भूमि के बदले में मणि, सोना, गौ, आदि जो भी कुछ उचित हो, दीजिये।"

दशरथ ने तब दस लाख गौ, अरब सोने की मुहरें। चार अरब चान्दी की मुहरें दान में दे दीं। उन्होंने सारा धन ऋष्यशृंग और वशिष्ठ को दे दिया। वशिष्ठ आदि ने उस धन को उचित भागों में आपस में बांट लिया।

इतने में एक गरीब ब्राह्मण ने आकर दशरथ के सामने हाथ पसारा। दशरथ ने तुरत अपने हाथ का कंकण उतारकर उसे दे दिया। ब्राह्मणों ने दशरथ को आशीर्वाद दिया।

अश्वमेघ यज्ञ के समाप्त होने पर, ऋष्यशृंग ने दशरथ से पुत्रकामेष्टि यज्ञ करवाया। अग्नि से निकलनेवाले हवि का भोग करने के लिए सब देवता, अपने अपने स्थान पर आकर बैठ गये। तब

देवताओं ने ब्रह्मा से शिकायत की कि कैसे रावण उनको सता रहा था।

ब्रह्मा ने कहा—"दुष्ट रावण ने यह तो माँगा है कि वह देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस आदि से न मारा जा सके। यह लो, महाविष्णु दशरथ की एक पत्नी के गर्भ से लड़के के रूप में पैदा होने जा रहे हैं। वे नर रूप में राक्षस का संहार करेंगे।" उसने देवताओं से कहा। देवता बहुत आनन्दित हुए।

इतने में हवनकुण्ड में से चौंधियाता हुआ, एक महाभूत बाहर निकला। उस भूत ने अपने हाथ में एक कलश रखा हुआ था। कलश अच्छे सोने का बना हुआ था। उस पर ढकना भी था।

उस भूत ने दशरथ से कहा—"राजा, देवताओं ने इसमें खीर बनाकर भेजी है। प्रजापति की आज्ञा पर मैं इसे लाया हूँ। यदि तुमने इस खीर को अपनी पत्नियों को खिलाया, तो उनके पुत्र होंगे।

दशरथ ने खुशी-खुशी उस कलश को ले लिया। भूत की प्रदक्षिणा करके उसने उसको नमस्कार किया। भूत अदृश्य हो गया।

इन्द्र के वाली, सूर्य के सुग्रीव, बृहस्पति के तारा, कुबेर के गन्धमादन, विश्वकर्मा के नल, अग्नि के नील, अश्विनी देवताओं के मैन्द-द्विविद, वरुण के सुषेण, वर्जन के शरभ, वायुदेव के हनुमान पैदा हुए। ये सब बड़े बलशाली वानर श्रेष्ठ थे। और देवताओं के हज़ारों की संख्या के बन्दर पैदा हुए। वानरों के साथ रावण के संहार के लिए भालू और लँगूर आदि भी पैदा हुए। ये वानर ऋष्यमूक पर्वत के पास वाली और सुग्रीव को राजा बनाकर, नल, नील और हनुमान को मन्त्री बनाकर जीवन व्यापन करने लगे।

दशरथ ने उस कलश में रखी खीर से आधी खीर कौशल्या को दी। जो बची, उसमें से आधी सुमित्रा को दी और जो बची उसमें से आधी कैकेयी को दी। तीनों के ले लेने पर, जो कुछ बचा, उनको फिर सुमित्रा को दी।

जल्दी ही कौशल्या, सुमित्रा, कैकेयी, गर्भिणी हो गईं।

इधर महाविष्णु के मानव रूप में अवतरित होने के लिए तैयारियाँ हो रही थीं और उधर ब्रह्मा की आज्ञा पर देवता कामरूप वानरों की सृष्टि कर रहे थे।

पुत्रकामेष्टि यज्ञ के बारह महीने बाद, चैत्रशुभ नवमी के दिन, पुनर्वसु नक्षत्र के अन्तर्गत, कौशल्या ने राम को जन्म दिया। पुष्यमी नक्षत्र के अन्दर कैकेयी के भरत पैदा हुआ। अश्लेष नक्षत्र में ठीक मध्यान्ह के समय सुमित्रा ने लक्ष्मण और शत्रुघ्न को जन्म दिया।

अयोध्या नगर में नागरिकों ने उत्सव मनाये। गलियाँ, नर्तकों और गायकों से खचखच भरी हुई थीं। दशरथ ने असंख्य गौओं, अन्न आदि का दान दिया।

चारों बच्चे बड़े हो रहे थे। यद्यपि वे एक माँ के बच्चे न थे, तो भी राम और लक्ष्मण हमेशा हिलमिल कर रहा करते। एक ही जगह भोजन करते, एक ही जगह सोते।

उसी तरह भरत और शत्रुघ्न हमेशा मिलकर रहते। वे सब वेद और शास्त्रों का अध्ययन करते, बाण-विद्या का अभ्यास करते, माता-पिता की सेवा शुश्रुषा करते युवक बने।

कालानुसार दशरथ उनके विवाह के बारे में मन्त्रियों से मन्त्रणा करने लगा।

जब राजा और मन्त्री सलाह मशवरा कर रहे थे, तो द्वारपालकों ने आकर बताया—"महाराज, कुशित वंश के राजकुमार, विश्वामित्र महामुनि आपके दर्शन करने द्वार पर खड़े हैं।" तुरत दशरथ पुरोहित को साथ लेकर विश्वामित्र का स्वागत करने गया। उसकी अर्घ्य आदि से पूजा की।

विश्वामित्र ने कुशल प्रश्न पूछे—"राजा, क्या तुम और तुम्हारी प्रजा सुखी है? शत्रु भय तो नहीं है? उसने वशिष्ठ आदि का अभिवादन किया और राजप्रसाद

में प्रवेश करके उचित आसन पर बैठ गया।

"महामुनि, आपके आगमन से मुझे बहुत आनन्द हो रहा है। मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?" दशरथ ने विश्वामित्र से पूछा।

विश्वामित्र ने सन्तुष्ट होकर कहा—"राजन्, मैंने एक यज्ञ शुरु किया है। परन्तु दो पराक्रमी राक्षसों ने मेरी यज्ञ वेदि पर रक्त मांस डालकर, उसको अपवित्र कर दिया। यदि उसको गुस्से में शाप देता हूँ, तो मेरा व्रत भंग होता है। मैं दुविधा में हूँ। इसलिए ही मैं आया हूँ। मेरे साथ अपने बड़े लड़के राम को भेजो। यह लड़का मारीच सुबाहु राक्षसों को मेरा यज्ञ भंग न करने देगा। उसे ही बहुत कीर्ति मिलेगी। राम उन राक्षसों को आसानी से मार सकेगा। यह वशिष्ठ भी जानते हैं।"

यह सुनते ही दशरथ का हृदय रुक-सा गया। भय और दुःख होने लगा। सिंहासन से उठकर, काँपते हुए उसने कहा—"महामुनि, राम बच्चा है। अभी वह सोलह वर्ष का भी नहीं हुआ है। वह बाण विद्या भी ठीक तरह नहीं जानता है। वह राक्षसों से कैसे युद्ध करेगा! मेरे पास एक अक्षौहणी सेना है। मैं ही आकर राक्षसों को मार दूँगा। मगर वे राक्षस हैं कौन? कितने डीलडौल हैं वे? वे किसके लड़के हैं?"

विश्वामित्र ने कहा—"तुम रावण को तो जानते ही हो। उसने ब्रह्मा को प्रसन्न करके बहुत-सी शक्तियाँ पायी हैं। वह रावण विश्रवसु का लड़का है और कुबेर का भाई है। वह जब स्वयं यज्ञ भंग नहीं कर पाता है, तो इन बलवान

मारीच और सुबाहु को यज्ञ भंग करने के लिए भेजता रहता है।"

"अरे रावण! उसके सामना मैं ही नहीं कर पाता हूँ। यह लड़का राम उसका क्या मुकाबला करेगा। राम का भेजा जाना बिल्कुल उचित नहीं है।" दशरथ ने कहा।

क्रोध में विश्वामित्र की आँखें लाल हो गईं। "महाराज, वचन देकर मुकरनेवाले हो यह बदनामी लेकर आराम से जीओ।" कहता कहता वह तपाक से उठा।

तब वशिष्ठ ने दशरथ को समझाते हुए कहा—"राजा, तुम ऐसा काम कर रहे हो, जो तुम्हें नहीं करना चाहिए। वचन देकर मुकर कर ईक्ष्वाकु वंश पर कलंक लगा रहे हो। तुम विश्वामित्र को क्या समझ रहे हो! कोई ऐसा अस्त्र नहीं है, जो ये न जानते हों, वे नये अस्त्र भी बना सकते हैं। क्या वे इतनी दूर इसलिए आये हैं, क्योंकि वे उन राक्षसों को स्वयं नहीं मार पाये हैं। ये तुम्हारे लड़कों का उपकार करने आये हैं। तुम राम को निश्चित रूप से उनके पास भेजो। जब तक वे उनके साथ हैं, उन पर कोई आपत्ति नहीं आ सकती।"

इन बातों को सुनकर दशरथ का ढाढ़स बंधा। उसने राम, लक्ष्मण को बुलाकर विश्वामित्र को सौंपा। विश्वामित्र आगे आगे चलने लगा, राम और लक्ष्मण उसके पीछे पीछे।

उन दोनों के पास धनुष-बाण थे। उनके हाथ पर कवच थे। पैरों में पादरक्षक थे। वे हाथ में तलवार लेकर विश्वामित्र के पीछे-पीछे चलने लगे। (अभी है)

हमारे देश के आश्चर्य:

खजुराहो

आज खजुराहो मध्यप्रदेश में एक गाँव-सा है। परन्तु मध्ययुग में यह भारत के मुख्य नगरों में एक था। भारतीय मूर्ति कला में खजुराहो का एक विशेष स्थान है, क्योंकि जो मूर्तिकला यहाँ पाई जाती है भारत में कहीं भी नहीं पाई जाती।

एक समय में ८५ मन्दिर थे। अब तीस मन्दिर ही हैं। प्रायः ये सब ९५० ई. वीं. और १०५० ई. वीं. में बनाये गये हैं। इन सभी मन्दिरों में उत्तम शिल्प है। और इस श्रेणी का शिल्प कहीं और नहीं है इन मन्दिरों में सब से बड़ा अत्यन्त निपुणता से निर्मित, कन्दरिया महादेवालय है। इसमें ८०० मूर्तियाँ हैं। और प्रत्येक मूर्ति अपने आप में कला की दृष्टि से महान है। इसी तरह चतुर्भुजालय पार्श्वनाथालय, आदि भी बहुत सुन्दर हैं। इनका निर्माण भी बहुत मनमोहक है। इसमें असंख्य मूर्तियाँ हैं। स्तम्भों में भी अच्छी कारीगरी की गई है।
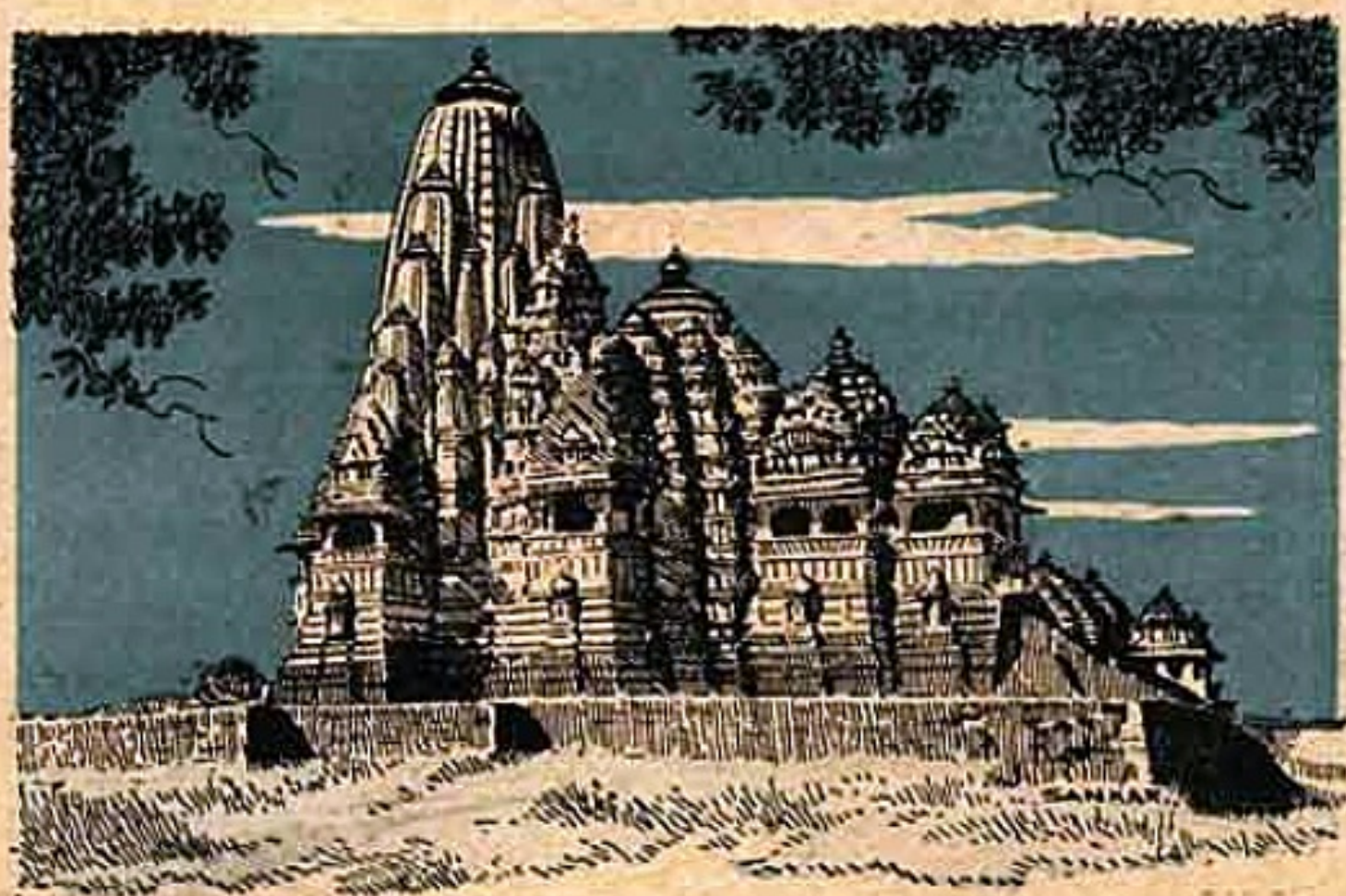
१. राजशंकर चौखम्भा, वाराणसी

क्या आप अपनी पत्रिका नेपाली भाषा में भी प्रकाशित करते हैं ?

जी नहीं ।

२. शीलनिधि यादव, "पथिक" कलकत्ता

क्या "चन्दामामा" बंगला में भी प्रकाशित होती है ?

जी नहीं ।

३. बी. बालचन्द्रन, मद्रास

क्या आप "चन्दामामा" को साप्ताहिक पत्र नहीं बना सकते ?

नहीं, अभी तो नहीं ।

४. प्रेमचन्द्र अग्रवाल, कलिम्पोन्ग

"पाठकों के मत" और "प्रश्नोत्तर" स्तम्भ का पता बताने का ज़रा कष्ट करें ?

वही पता है, जिस पते पर आपने अपना पत्र भेजा है ।

५. नन्दकिशोर प्रसाद, पटना

आप कुछ वर्ष पूर्व "रंगीन चित्र कथा" प्रकाशित करते थे वह अब क्यों नहीं प्रकाशित करते हैं ?

फिलहाल कागज़ की कमी के कारण यह सम्भव नहीं है ।

६. चन्द्रेश चन्द्र, कोटा

"अग्निद्वीप" के बाद आप कौन-सा धारावाहिक उपन्यास छाप रहे हैं?

भयंकर घाटी।

७. ब्रह्मानन्द, सुजानगढ़

सब से पहले चन्दामामा कब प्रकाशित हुआ था ?

सितम्बर १९४९ में प्रकाशित हुआ।

८. दुर्गाप्रसाद, जबलपुर

क्या आप जंगल के टार्ज़न की कहानी छाप सकेंगे।

नहीं भाई।

९. लक्ष्मी प्रसाद श्रीवास्तव, अजमेर

आप "चन्दामामा" में हास्य कथा क्यों नहीं छपवाते हैं ?

हास्य कथा के शीर्षक से तो नहीं छापते हैं, पर कई हास्य कथायें प्रकाशित हुई हैं, और प्रकाशित करते रहेंगे।

१०. प्रवीणकान्त साह, अजमेर

क्या "चन्दामामा" गुजराती में भी प्रकाशित होता है ?

प्रकाशित होता है।

११. श्री रणधीर सिंह, पाँचाल

आप "चन्दामामा" में लोक कथाओं एवं जातक कथाओं को स्थान क्यों नहीं देते हैं ?

हम बहुत-सी जातक कथायें छाप चुके हैं और भविष्य में छापेंगे भी। लोक कथायें भी प्रकाशित होती हैं, और होती रहेंगी।

१२. श्री जुगल किशोर खत्री, मटेली

अगर मैं चन्दामामा में विज्ञापन देना चाहूँ तो क्या करना चाहिये ?

विज्ञापन विभाग-चन्दामामा कार्यालय को लिखिए।

त्याग

★

रामतीर्थ

एक दिन दो साधुओं को एक साथ जाना पड़ा। उस में एक ने सब कुछ छोड़ दिया था। उसका विश्वास था कि सर्वस्व त्यागने पर ही संसार से मुक्ति मिल सकती थी। उसके पास कानी कौड़ी न थी।

दूसरे स्वामी का विश्वास था, कि जब तक आदमी संसार में है, उसका बिना धन के गुजारा नहीं हो सकता। इसलिए उसके पास हमेशा कुछ न कुछ पैसा रहता।

दोनों दिन भर चलते रहे। शाम होते होते वे एक नदी के किनारे पहुँचे।

"आज रात हम यहीं किनारे पर काट देंगे। कल नदी पार करने की सोचेंगे।" बिना पैसेवाले स्वामी ने कहा।

"यहाँ कोई गाँव नहीं है। निर्जन प्रदेश है। जंगली जानवर आ सकते हैं। खतरा है। अगर मदद के लिए हम चिल्लाये भी तो कोई सुन नहीं पायेगा। मेरे पास पैसा है। नाववाले को पैसा दे देंगे और पार जाकर गाँव में रात काट देंगे।" पैसेवाले स्वामी ने कहा।

दोनों ने नाव में नदी पार की। गाँव में पहुँचे। धर्मशाला में जाकर भोजन करके आराम से लेट गये।

"देखा, आप कहते थे कि सब कुछ छोड़ देना चाहिये। मेरे पास पैसा था, इसीलिए तो हम नाव में नदी पार कर सके और यह रात आराम से सराय में काट सके।" पैसेवाले स्वामी ने कहा।

"पैसा होने से हमें यह आराम नहीं मिला है, परन्तु पैसे के छोड़ देने से। मैंने जो कहा है वह झूट नहीं है। त्याग से आदमी मुक्त हो सकता है।" बिना पैसे के स्वामी ने कहा।
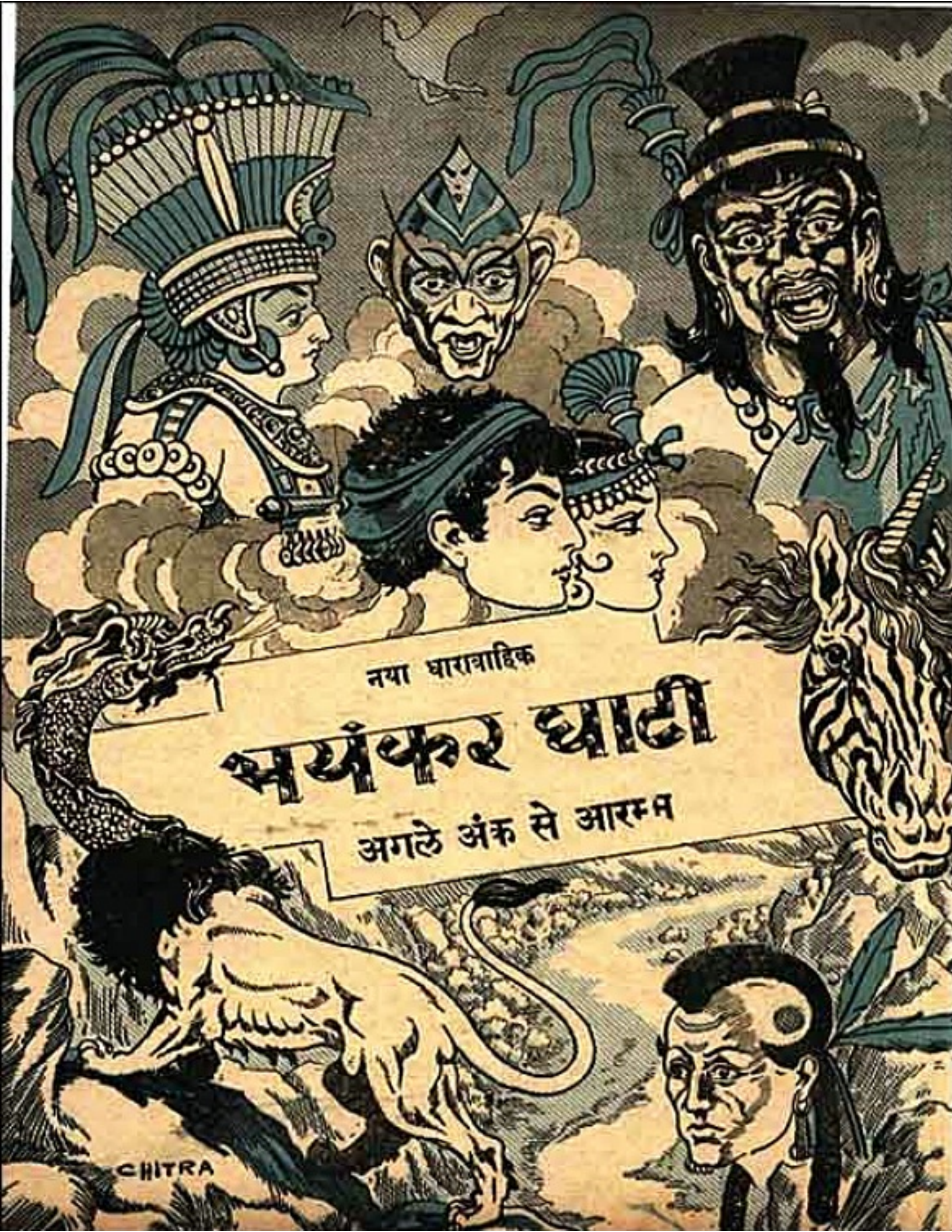
नया धारावाहिक
भयंकर घाटी
अगले अंक से आरम्भ
CHITRA

अन्तिम पृष्ट

कृष्ण और अर्जुन फिर युद्धभूमि की ओर चले। कृष्ण ने अर्जुन से कहा—

"सत्रह दिनों से युद्ध चल रहा है। दोनो पक्ष की सेनायें क्षीण हो गई हैं। कौरवों के ये महारथ अश्वत्थामा, कृप, कृतवर्मा, कर्ण, शल्य ही बाकी रह गये हैं।

इस बीच युद्धभूमि में भीम अकेला, शत्रुओं का भयंकर नाश कर रहा था। उसे शत्रुओं ने घेर लिए। दुर्योधन ने शकुनि से जैसे भी हो भीम को मारने के लिए कहा। शकुनि भीम से लड़ा। बुरी तरह घायल होकर, जान बचाकर भाग गया।

भीम की मार न सहकर धृतराष्ट्र के लड़कों ने कर्ण का आश्रय माँगा। कर्ण खूब लड़ा। कृष्ण ने अर्जुन के रथ को कर्ण की ओर बढ़ाया। पर उन दोनों का सीधा युद्ध नहीं हुआ। झुन्डों में ही युद्ध हो रहा था।

पर उस युद्ध में दुश्शासन को भयंकर रूप से लड़ता देख, भीम उस पर इस तरह कूदा, जिस प्रकार की एक हरिण पर शेर कूदता है। दोनों एक दूसरे को जान से मारने के लिए लड़ रहे थे।

पहिले पहल दुश्शासन ने अपने बाणों से भीम को खूब सताया। जब उन दोनों ने एक दूसरे पर शक्तियाँ छोड़ीं तो भीम ने भी अपनी प्रचण्ड गदा छोड़ी उससे दुश्शासन का रथ चकनाचूर हो गया। उसके सिर पर गदा लगी। वह घायल हो गया। दुश्शासन भय से भागने लगा।

तुरत भीम गरजा। रथ में से उतरा। और दुश्शासन की ओर भागा। इसी दुश्शासन ने भरी सभा में द्रौपदी का अपमान किया था। भीम का वह दृश्य याद हो आया। वह चिल्लाया—"कर्ण, दुर्योधन, देखो मैं इस दुश्शासन को मारने जा रहा हूँ। अगर बचा सको तो इसको बचा लो।

भीम ने दुश्शासन के गले पर पैर रख तलवार से उसका हृदय फाड़ दिया, उसका खून पीकर, उसने उसी तलवार से उसका सिर काटकर कहा—"पापी, मृत्यु ने ही तेरी रक्षा की। मैं अब और तेरा कुछ नहीं कर सकता।"

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

सितम्बर १९६१ :: पारितोषिक १०)
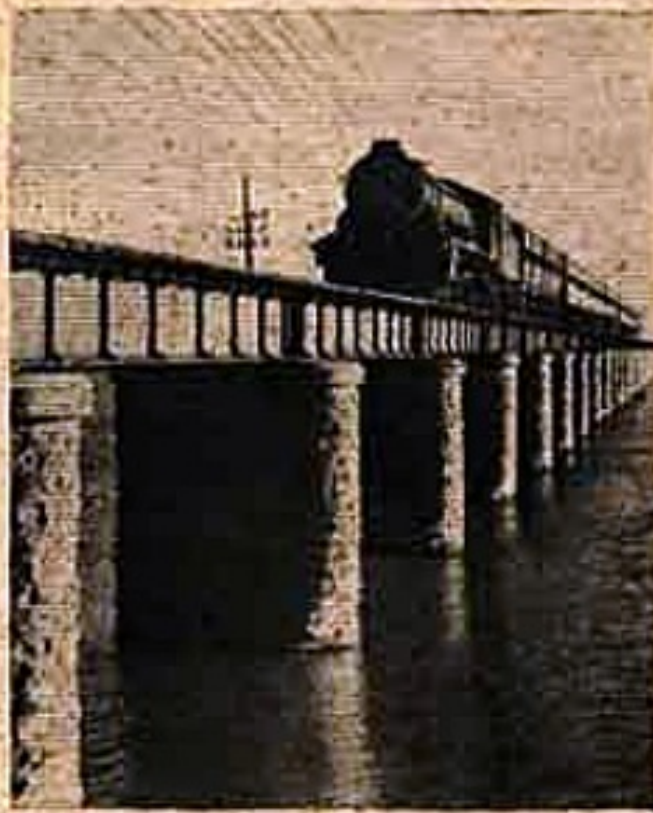
कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७ जुलाई '६१ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता,
चन्दामामा प्रकाशन,
वडपलनी, मद्रास-२६

जुलाई - प्रतियोगिता - फल

जुलाई के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : माँ का दूध अमृत समान !
दूसरा फ़ोटो : मातृ-प्रेम में हो उत्थान !!

प्रेषक : श्री कैलाशचंद्र तूली, पो. इंद्री, जि. करनाल (पंजाब)

चित्र-कथा

एक रोज दास और वास बाग में जा रहे थे कि एक शरारती लड़का, एक बड़ा-सा कुत्ता साथ लेकर कुछ दूरी पर खड़ा था। "टाइगर" को देख, वह कुत्ता जोर से भोंका, और उसे काटने दौड़ा। शरारती लड़का चिल्लाया "भाग जाओ, भाग जाओ" इतने में झाड़ी के पीछे से एक मेंढा आया। और बड़े कुत्ते से टकराने भागा। उन्हें देखते ही, शरारती और उसका कुत्ता, तेजी से भागने लगे। "टाइगर" ने उनका पीछा किया।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

बसंती
LUX
हरा
LUX
नीला
LUX
गुलाबी
LUX
'मेरा मनपसंद
लक्स
इंद्रधनुष के
चार रंगों में
और सफ़ेद भी!'
वहीदा रॆहमान
कहती हैं
हिंदुस्तान लीवर का उत्पादन

YOUR HOME needs
AMARJOTHI
FABRICS
अमरज्योति फैब्रिक्स
हाथ से बुने हुए चादर और फर्निशिंग।
उत्तम बनावट तथा नयनरम्य नमूनें
आपके शहर के सभी बड़ी दुकानों में मिलते हैं।
पो. बॉ. नं. २२, कारूर (दक्षिण भारत)
शाखाएँ: बम्बई, दिल्ली, मद्रास।

बारबार की खांसी और सर्दी से जीवनशक्ति कम होती है.... फेफड़े की बीमारी को रोकने की ताकत घटती है।

खांसी और सर्दी कष्टकर ही नहीं बल्कि उनके बारबार सताने के कारण प्रचण्ड बीमारी का होना संभव है। इसलिये सावधान रहिये। वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड का सेवन करना शुरू कीजिये।

वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड

★ खांसी और फेफड़े की तकलीफोंमें आराम पहुंचाता है।
★ खून की पुष्टि करता है।
★ खांसी और सर्दी-जुकाम का मुकाबला करने की ताकत देता है।
★ शरीर के सभी अवयवों को स्फूर्ति देता है।

क्रियोसोट तथा गुवेकाल युक्त, वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड फेफड़े की तकलीफों को हटाकर खांसी और सर्दी को रोक देता है। सारे शरीरको स्वस्थ बनाकर बीमारी से बचने रहने की ताकत पैदा करता है और हमेशा तन्दुरुस्त बनाये रखता है। बच्चे और बूढ़ों के लिये समान रूपमें गुणकारक है।

तन्दुरुस्त बने रहने के लिये सुस्वादु

वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड

(लाल रंगीन लेबल)

लीजिये

केसरी रंगीन लेबल का वाटरबरीज़ विटामिन कम्पाउन्ड भी प्राप्य है जो श्रेष्ठ प्रसिद्ध टॉनिक है

वार्नर-लैम्बर्ट फार्मास्यूटिकल कम्पनी (सीमित दायित्व के साथ यू. एस. ए. में संस्थापित)

Photo by V. Thithu
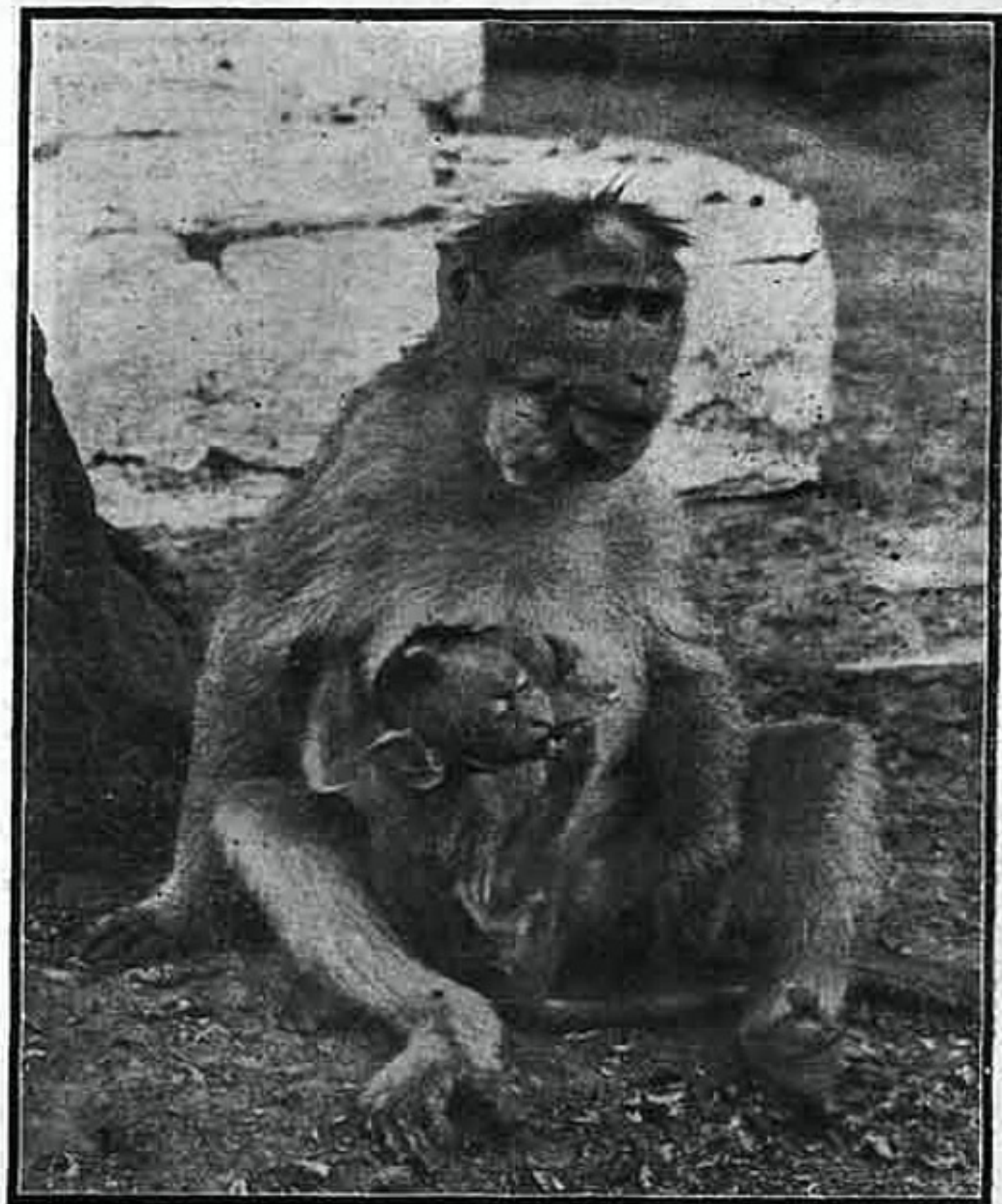
पुरस्कृत परिचयोक्ति

मॉं का दूध अमृत समान!

प्रेषक: कैलाशचन्द्र तुली - इन्द्री

Photo by P. Krishnakumar

पुरस्कृत परिचयोक्ति

मातृप्रेम में हो उत्थान !!

प्रेषक: कैलाशचन्द्र तूली - इन्द्री

LIFEBUOY
SOAP

चित्र
तारकाओं का
प्रिय
Remy
BORATED
TALCUM POWDER
Aykar
रेमी
पाउडर

महाभारत